ॐ

(ग्रन्थ रत्न)

श्री परशुराम आख्यान



Designed By : Medhavi Sharma

कुसुम शर्मा 'अंतरा'



नाम - कुसुम शर्मा 'अंतरा'

पत्नी - समाज सेवक श्री सुभाष चन्द्र शर्मा, सुपुत्र स्वर्गीय पं० धनी राम शर्मा एवं श्रीमती वीरो देवी शर्मा

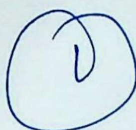
व्यवसाय - अध्यापिका, M.A. (Hindi) M.Ed.

सुपुत्री - स्व. डा० अमरनाथ सूदन एवं श्रीमती जय कुमारी

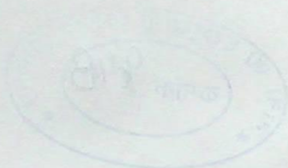
पता - W.No. 11, House No. 36 Govind Nagar, MH Chowk Udhampur

मोबाईल - 94198-89448, 94191-62148

A1 → R3







ॐ

(ग्रन्थ रत्न)

श्री परशुराम आख्यान



कुसुम शर्मा 'अंतरा'

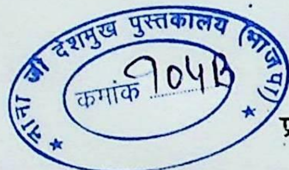
Shri Parshuram AAkhyaan

by

Kusum Sharma
Behind LIC office, H.No.-36,
W.No.-11, Govind Nagar
M.H. Chowk Udhampur, J&K
Mobile No. 9419162148, 94199-89448

आवरण

मेधावी शर्मा (B.Tech. CSE SMVDU J&K)



प्रथम संस्करण

2017

*

प्रतियां

300 प्रतियां

*

मूल्य

₹ 300/-

*

प्रिंटर

क्लासिक प्रिंटर्ज़

नेशनल हाइवे, बाड़ी ब्राह्मणां, जम्मू

दूरभाष-(01923)-220243, 94191-49293

आभार

सन्त श्री सुभाष शास्त्री जी महाराज

मैं हृदय से आभारी हूं परम पूजनीय सन्त श्री सुभाष शास्त्री जी की जिन्होंने परोक्ष रूप से मेरे लेखन को सदैव प्रोत्साहित किया तथा जिनकी अमृत वाणी सुनकर मैं अपने भक्ति भाव को पोषित करती रही। सन्त जी के प्रवचन मन की गहराइयों में श्रद्धा के बीज बोने का कार्य करते हैं। इसी श्रद्धा से जिज्ञासा उत्पन्न होती है और वह जिज्ञासा धार्मिक ग्रन्थ के अध्ययन अथवा श्रवण से शान्त होती है। मेरी धर्मप्रियता, जिज्ञासा तथा श्रद्धा आज पल्लिवत होकर ग्रन्थ रूप में उजागर हुई है उसके लिए मैं सन्त जी की आभारी हूँ तथा उनका हृदय से धन्यवाद करती हूँ तथा हाथ जोड़कर उनसे अनुरोध करती हूँ कि वे अपना आशीर्वाद सदैव मेरे ऊपर बनाए रखें।

प्रोफैसर श्री शिव निर्मोही जी

साहित्य क्षेत्र के जाने माने लेखक श्री शिव निर्मोही जी को मैं अपना साहित्यिक गुरू मानती हूं। माननीय श्री शिव निर्मोही जी की अनेकों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। डुग्गर साहित्य को दिया गया उनका योगदान प्रशंसनीय है ही इसके साथ-साथ यह डुग्गर देश को उनके द्वारा दी गई अनमोल निधि हैं जो अपने भीतर अनुपम तथ्यों को संजोए हुए हैं।

उनके द्वारा लिखित "डुग्गर का इतिहास और संस्कृति" लोकवार्ता, लोक साहित्य, भाषा विज्ञान एवं धर्म और दर्शन आदि विषयों पर लगभग तीस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

माननीय श्री शिव निर्मोही जी ने सदैव मुझे प्रोत्साहित किया है तथा एक पिता जी की भांति मेरा मार्गदर्शन किया है। मैं सदैव उनकी आभारी रहूंगी। ईश्वर से उनकी दीर्घायु तथा सुस्वास्थ्य की कामना करती हूँ।

श्री सुभाष चन्द्र शर्मा

मैं आभारी हूँ अपने पति श्री सुभाष चन्द्र शर्मा जी की जिन्होंने सदैव मेरे लेखन को प्रोत्साहित किया तथा प्रत्येक कदम पर मेरा साथ दिया।

उनकी आदर्शवादी तथा प्रगतिवादी विचारधारा उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो दूसरों का मार्गदर्शन करती है। परोपकार की भावना से ओत-प्रोत उनके विचार स्वस्थ समाज का निर्माण करते हैं। ईश्वर उनकी मनोकामनाएं पूर्ण करें तथा उन पर अपनी कृपा बनाए रखें।

मेधावी शर्मा, (B. Tech. CSE SMVDU J&K)

चित्रकला एक श्रेष्ठ कला है यह एक विश्वव्यापी भाषा होती है। मानव की सबसे प्राचीन लिपि चित्रलिपि है। सचित्र लेखन पाठकों को आकर्षित करता है विविध कलाओं में साहित्य कला का एक विशिष्ट स्थान है। चित्रकला के सहयोग से वह और अधिक प्रभावशाली बन जाती है।

मैं आभारी हूं मेधावी शर्मा की जिन्होंने भगवान श्री परशुराम आख्यान के लिए अपने हाथों और कल्पना से बनाए हुए चित्र प्रदान करके प्रभु का शुभ आशीष प्राप्त किया। कथा से सम्बन्धित चित्र निश्चित ही पाठकों की कल्पना को एक स्वरूप तथा दृश्य प्रदान करेंगे। इस अति उत्तम कार्य के लिए मैं हृदय से उनका धन्यवाद करती हूं। चित्रकार मेधावी शर्मा चित्रकला में दो बार अन्तर्राष्ट्रीय स्वर्ण पदक विजेता हैं तथा कई अन्य प्रतियोगिताओं में प्रथम स्थान प्राप्त कर चुकी हैं।

स्माइल शर्मा, छात्रा 10वीं कक्षा, के० सी० पब्लिक स्कूल, उधमपुर J&K

कला और योग्यता के सामने आयु के बन्धन स्वतः ही खुल जाते हैं। क्योंकि ज्ञान अपने आप में उन्मुक्त होता है। वह सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। मैं आभारी हूं स्माइल शर्मा की जिसकी आयु मात्र 15 वर्ष है। किशोरावस्था में ही लेखन तथा पठन की गहराईयों की समझ रखने वाली कन्या ने मात्र चार-पांच वर्ष की आयु से ही कविता की तुकबन्दी करना आरम्भ कर दी थी। उनकी लेखन शैली अत्यन्त विशिष्ट है तथा उनकी कविताओं में अनोखा गांभीर्य है।

मैं हृदय से उनकी आभारी हूँ जो उन्होंने इस आख्यान को कई बार पढ़ा तथा हर कदम पर अपने सुझाव देती रहीं। उन्होंने मेरे उत्साह को कभी शिथिल नहीं पड़ने दिया। मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूं कि वे अपनी कृपा उन पर सदैव बनाए रखें।

परमपिता परमात्मा की कृपा अपने स्व० सास-ससुर श्रीमती वीरो देवी एवं. पं. श्री धनी राम शर्मा (फंगैलिया) और मेरे स्व. माता-पिता श्रीमती जय कुमारी एवं डॉ. अमर नाथ सूदन जी के आशीर्वाद से ही मैं प्रस्तुत ग्रन्थ रत्न लिख पायी।

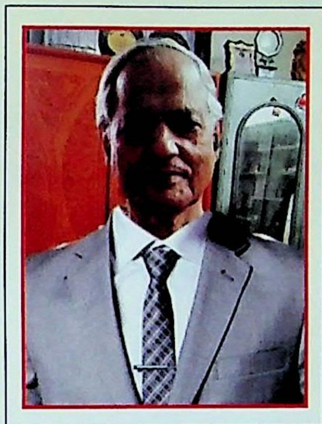
ooo

दूरभाष : 0191-2574998



डोगरा ब्राह्मण प्रतिनिधि सभा

चाणक्य चौक परेड, जम्मू। 180001



शुभकामनाएं

"श्री परशुराम आख्यान" ग्रंथ जम्मू-कश्मीर में प्रथम बार प्रभु की प्रेरणा से श्रीमती कुसुम शर्मा जी के प्रयास से लिखा गया। इस (पुस्तक) ग्रन्थ में ईश्वर के दस अवतारों का विवरण है और भगवान श्री परशुराम जी की कथा विस्तारपूर्वक है। इसके साथ ही इसमें सनातन धर्म, परशुराम चालीसा तथा सतगुरू चालीसा लिखा गया है। हम सभी डोगरा ब्राह्मण प्रतिनिधि सभा की ओर से उन्हें इस शुभ कार्य के लिए बधाई देते हैं तथा आने वाले समय के लिए उन्हें शुभकामनाएं देते हैं कि वह ऐसे धर्मकार्य तथा सद्कार्य भविष्य में भी करती रहें।

V.P. Sharma
President
Dogra Brahman Pratinidhi Sabha
Parade, Jammu.

परशुराम युवा दल जम्मू-कश्मीर

मैं परशुराम युवा दल के सभी सदस्यों का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। परशुराम युवा दल कई वर्षों से भगवान परशुराम जी की शोभा यात्रा पूरी श्रद्धा से निकालते आ रहे हैं तथा सदा सामाजिक और धार्मिक कार्यों में अग्रसर रहते हैं। इस ग्रन्थ के प्रचार-प्रसार और प्रकाशन में इनका विशेष सहयोग रहा है। मैं परशुराम युवा दल उधमपुर की सदस्या होने में गौरव अनुभव करती हूँ।

जय श्री परशुराम

कुसुम शर्मा 'अंतरा'

निवेदन

प्रिय पाठको

विभिन्न पुराणों व अन्य साधनों से उपलब्ध जानकारी के आधार पर भगवान परशुराम जी की लीलाओं के अंश एकत्रित करके "श्री परशुराम आख्यान" की रचना का प्रयास किया गया है। इसकी रचना भगवान परशुराम को ध्येय कर, अंतकरण की श्रद्धा से परिपूर्ण होकर की गई है। समाज में फैली हुई कुरीतियों, कपटों तथा अज्ञानता को त्याग कर यदि हम भगवान के बताए मार्ग पर चलने का प्रयास करें तो निश्चित ही धर्म सुरक्षित तथा संरक्षित रह सकता है।

इस सृष्टि की रचना परब्रहम द्वारा की गई है। उन्हीं की दिव्य शक्तियों से पृथ्वी, सूर्य, चांद, सितारों को शक्ति मिलती है। वही समय-समय पर पुरूषोतम रूप में अवतार लेते हैं तथा धर्म की स्थापना करते हैं। इस जगत का निर्माण करने में उन्हीं परब्रहम की शक्ति है। धर्म सत्य की स्थापना करता है तथा अधर्म से सत्य का नाश होता है। धर्म को तो प्रत्येक युग में यात्रा करनी है इसलिए आने वाले काल को धर्म प्राप्त हो सके इसके लिए अधर्म का नाश आवश्यक होता है।

यह आख्यान भगवान विष्णु के छठे अवतार भगवान श्री परशुराम जी के जीवन पर आधारित है। श्री परशुराम जी की लीलाओं के अंश भिन्न-भिन्न पुराणों तथा अन्य साहित्यिक तथा अन्य साधनों से लिए हैं तथा उन सभी का अध्ययन करने के उपरान्त एक ग्रन्थ के रूप में पिरोने का प्रयास किया है।

अन्त में जिन भगवान परशुराम जी की कृपा से इस ग्रन्थ रत्न की रचना की गई है उन्हीं श्री परशुराम जी से क्षमा मांगती हुई यह श्री ग्रन्थ रत्न उन्हीं के चरणों में समर्पित करती हूं।

नोट :- भगवान की लीलाओं का वर्णन करने में यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो इसे मेरी भगवान के प्रति अटूट श्रद्धा समझकर क्षमा करें तथा अपने सुझाव देकर मेरा मार्गदर्शन करें।

विनीता

श्रीमती कुसुम शर्मा 'अंतरा'

उधमपुर, जम्मू-कश्मीर

सर्वप्रथम मैं भगवान श्री परशुराम जी के श्री चरणों में प्रणाम करती हूँ कि उन्होंने मुझ जैसी साधारण मनुष्य के हृदय को प्रेरणा देकर इतना सामर्थ्य प्रदान किया कि मैं उनके जीवन से संबन्धित प्रकरणों को एक ग्रन्थ (पुस्तक) रूप में पिरोकर आपके समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास तथा साहस कर पाई। प्रभु के आशीष के बिना यह संभव नहीं था। यह सब प्रभु की इच्छा से हुआ है क्योंकि उनकी इच्छा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता है। मैं हाथ जोड़कर नतमस्तक हो प्रभु से यह निवेदन करती हूं कि वे सभी श्रद्धा युक्त हृदय वाले पाठकों को तथा वे सभी महानुभावों जिन्होंने इसके लेखन में मेरी सहायता की है उनको अपना शुभ आशीष प्रदान करें तथा उन पर सदैव कृपादृष्टि बनाए रखें।

उद्देश्य

हम जिस परिवार में जिस धर्म में जन्म लेते हैं उसी धर्म के अनुष्ठानों से हमें संस्कार प्राप्त होते हैं और हमारे संस्कार ही हमारी जीवन शैली को प्रभावित करते हैं हमारे जीवन का आधार हमारे संस्कार तथा वातावरण होता है। जब हम हिन्दू घराने में जन्म लेते हैं तो हिन्दू देवी-देवताओं के विषय में जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा हमारे अन्दर प्रबल हो जाती है और होनी भी चाहिए। हम मनुष्य हैं ईश्वर ने समस्त प्राणियों में से केवल मनुष्य को ही सोचने समझने तथा बोलने की शक्ति दी है। वह विवेकशील है तथा पढ़-लिखकर ज्ञान अर्जित करता है। इसी ज्ञान के आधार पर वह अपने आस-पास, भूत तथा भविष्यकालीन तथ्यों को जानने के लिए प्रयासरत रहता है वह सामाजिक, वैज्ञानिक, धार्मिक जानकारियां अधिक से अधिक प्राप्त करने का प्रयास करता है।

भगवान परशुराम जी श्री विष्णु भगवान के छठे अवतार हैं। उनका उद्भव त्रेतायुग में माना जाता है वे महाऋषि भृगु के वंशज ऋषि जमदग्नि के तथा माता रेणुका के सबसे छोटे पुत्र हुए जिनका बचपन का नाम राम था। भगवान शिव से परशु पाने पर वे परशुराम कहलाए। वे त्रेतायुग तथा द्वापर युग दोनों युगों में धर्म की रक्षा करने वाले एकमात्र देव हैं। उनके प्रसंग, उनके प्रकरण विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। उनके विषय में जानकारी प्राप्त करने वाले श्रद्धालुओं की जिज्ञासा को शान्त करने का प्रयास करते हुए इस ग्रन्थ की रचना की गई है विभिन्न स्रोतों से उपलब्ध उनके प्रकरणों का अध्ययन करके जो रूपरेखा तैयार हुई है, वही रूपरेखा आपके समक्ष एक ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत है।

इस रचना का यह उद्देश्य है कि वे सभी माननीय पाठकगण जो धार्मिक जिज्ञासा रखते हैं उन्हें एक ही ग्रन्थ से उनके समस्त जीवन का सार प्राप्त हो सके।

यह विदित हो कि ईश्वर सदैव वर्ण आश्रम, प्रजाति से ऊपर होते हैं। ईश्वर ने अपने दस अवतारों द्वारा हमें यह संज्ञान दिया है कि भले ही कभी वे जल प्राणी, थल प्राणी, मानव अथवा किसी भी वर्ण में प्रकट हुए हों परन्तु उनका उद्देश्य सदैव अधर्म का नाश करके धर्म की स्थापना करना रहा है। वे सभी गुणों से सम्पन्न हैं, तथा सभी गुणों के अधिष्ठाता भी हैं। वे ही पृथ्वी जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार इन आठों प्रकारों में विभाजित हैं। वही आठों बसुओं में समाए हैं।

प्रेरणा

आध्यात्मिक आनन्द अनन्त होता है। वह सागर से भी गहरा तथा आकाश से भी असीम है। इस आनंद से आत्मविभोर, व्यक्ति अंतस की गहराईयों में उतरकर ऐसे दिव्य प्रकाश का अवलोकन करता है जो सूर्य के बिना भी सुनहरी किरणों से ओत-प्रोत है। वहां पहुंचकर कोई इच्छा शेष नहीं रहती जो सन्तोष, प्रेम तथा ज्ञान से परिपूर्ण दुख और कष्ट रहित है। उन गहराईयों में उतरकर व्यक्ति मोह-माया के बन्धनों से मुक्त हो उठता है। कामना और लालसा की बेड़ियां स्वतः ही खुल जाती हैं। सहस्त्रों सूर्यों की आभा से प्रकाशित आत्मिक तथा आध्यात्मिक आनन्द से परिपूर्ण हो, अंतस शुद्ध हो उठता है। इसी आनन्द के सागर में उतरकर ईश्वर की अनुभूति होती है। ऐसी ही अनुभूति से प्रेरित होकर श्री परशुराम आख्यान की रचना की गई है। सौभाग्य से श्री परशुराम जयन्ती पर अष्टधातु निर्मित अलौकिक प्रतिमा की स्थापना हमारे घर में हुई। वे सात दिन हमारे यहां रहे। इन सात दिनों में उनकी विधिवत् सेवा करते हुए अनन्त आनन्द की प्राप्ति हुई तथा मन में उनके विषय में अधिक से अधिक जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई।

भगवान श्री परशुरामजी की प्रतिमा के दर्शन मात्र से ऐसा प्रतीत हुआ मानो पौराणिक काल की परतें खुल रही हों, युगों-युगांतरों के समस्त द्वार पारदर्शी हो गए हों। हम इस कलियुग से मानों त्रेतायुग तथा द्वापर युग का अवलोकन कर रहे हों। मन का कौतूहल तथा आनन्द इतना गहराने लगा कि उनके विषय में जितने भी वृत्तांत थे वह सभी जानने की जिज्ञासा प्रबल हो उठी। इसी जिज्ञासा के वशीभूत मैंने श्री विष्णु पुराण, श्रीमद्भागवत गीता, श्री महाभारत, सुख सागर श्री रामायण तथा

श्री विष्णु के दसों अवतारों का अध्ययन किया। प्रत्येक ग्रन्थ में भगवान परशुराम से संबंधित प्रकरण पाए गए हैं। उनका शौर्य, उनका पराक्रम, उनकी वीरता, उनका बौद्धिक तथा शारीरिक बल सत्य, धर्म और न्याय के प्रति उनकी निष्ठा अवर्णनीय है। स्त्रियों के प्रति उनके हृदय में विशेष सम्मान रहा है। उनके दृष्टिकोण ने स्त्रियों का समाज में एक प्रगतिवादी मार्ग प्रशस्त किया। जिससे समाज में उनकी स्वीकार्यता को बढ़ावा मिला। इतने प्रभावशाली चरित्र का अध्ययन करना सौभाग्य का विषय हैं। ईश्वर के आशीर्वाद से यह सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ तथा उन्हीं की इच्छा से मेरे मन में यह सुविचार आए कि उनसे संबन्धित सभी तथ्यों तथा दृश्यों को एकत्रित करके एक ऐसी रूपरेखा तैयार करूं कि उनके जीवन के सभी पहलुओं को एक ही ग्रन्थ द्वारा जाना जा सके।

उनके जीवन के दृश्यों को चित्रांकित करने में यदि कोई त्रुटि रह गई हो, या यदि इसे मेरा दुस्साहस समझा जाये तो इसके लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ। ईश्वर बहुत दयालु हैं मैं उनसे क्षमा मांगती हूँ। वह निश्चित ही मुझे क्षमा कर देंगे। उनमें श्रद्धा रखने वाले भक्त जनों के हृदय भी विशाल होते हैं। उनके हृदय में अत्यन्त दया होती है, मैं उनसे भी क्षमा मांगती हूँ और आग्रह करती हूँ कि वे सभी इस आख्यान को हृदय से स्वीकार करने की कृपा करें।

सनातन धर्म

सर्वव्यापी सनातन अनन्त,
परब्रह्म सृष्टि रचयेता।
सूर्य, चांद, सितारों और
पृथ्वी को जो गति है देता।।

पुरूषोतम में विद्यमान जीवात्मा,
सर्वोच्च स्थिति का द्योतक।
सत्य, मधुर और प्रिय वचन,
कर्म, मोक्ष और ज्ञान का बोधक।।

त्रिगुण निर्मित पूर्ण जगत,
सत्व, रजो और तमस गुण।
योग मिलाए परब्रह्म से
'ॐ' सनातन प्रतीक चिह्न।

सनातन पथ पर अग्रसर हो,
प्रकटे मानव, समस्त देवगण।
ब्रहम जगत है जगत ब्रह्म है,
यही सनातन सत्य परम है।।

ध्यान, मोक्ष की गहन अवस्था,
ब्रह्म-ब्रह्मांड का रहस्य पुरातन।
करे मोक्ष को जो प्रतिपादित,
सर्वोत्कृष्ट यह मार्ग सनातन।।

पूर्ण ब्रह्मांड है रत्त धर्म,
जीवन-आधार चार आश्रम।
भगवदाश्रय परम धाम,
पौरूष से हो लिप्त स्वधर्म।।

गीता के उपदेश सनातन,
सनातन वेद-वेदांत ज्ञान।
दशावतारी ब्रह्मा सनातन,
सनातन पूर्ण महापुराण।।

वैष्णव, शैव, शाक्त स्वरूपा,
सर्वोत्तम लक्ष्य प्रदाता।
वेद-शास्त्रीय ज्ञान आलौकिक,
आत्मिक शक्ति प्रबल बनाता।।

सनातन गीताअमृत है दर्शन,
कर्म, ज्ञान, भक्ति का मंथन।
सूक्ष्म-स्थूल जड़-चेतन में,
निहित पूर्ण ब्रह्म ज्ञान धन।।

ब्रह्म अंश है आत्म तत्व,
ऊर्जा केन्द्र है देह के गौरव।
शुद्ध चित्त से कर्मरत हो,
ब्रह्मार्पण करें सर्वस्व।।

चार धामी तीर्थ सनातन,
अडिग हिमालय खड़ा अक्षुण्ण
बहती गंगा धारा अविरल,
परम पुजनीय गिरि गोवर्धन।।

पृथ्वी, जल, वायु अग्नि,
आकाश, मन, बुद्धि, अहंकार।
विभाजित है इन आठों में,
है एक, यही ब्रह्म प्रकार।।

सनातन ही बसा सामवेद में,
इन्द्रियों में मन आधार।
प्राणियों में चेतना शक्ति,
रूद्रों में शंकर साकार।।

ब्रह्म मत्स्य, ब्रह्म कश्यप,
वाराह, नृसिंह, वामन अवतार।
ब्रह्म ही परशुराम, राम,
कृष्ण, बुद्ध कल्कि अवतार।।

वही मरिचि, अत्रि, अंगिरा,
पुल्हा, क्रतु, पुल्स्य प्रचेता।
वही भृगु, नारद, विशिष्ट,
प्रत्यक्ष, परोक्ष का वही रचयेता।।

रहस्यमय संपूर्ण सनातन,
इसमें निहित ब्रह्म ज्ञान धन।
सर्वोत्कृष्ट उपनिषद कथन,
ईश संचालित जगत का कण-कण।।

सनातन धर्म है अनन्त,
महिमा इसकी अपरम्पार।
नतमस्तक इस धर्म के,
जो है हिन्दुत्व का आधार।।

कुसुम शर्मा
(एम.ए, एम.एड)
मोबाईल नं. 9419989448
एम. एच. चौक, ऊधमपुर (जे. एण्ड के.)

विषय सूची

ॐ श्री परशुराम स्तोत्र ॐ

नमोस्तुते भृगुकुल नन्दन।
विष्णु अवतार नमोस्तुते।।
नमोस्तुते जमदग्न्याय
महावीराय धीमहि नमोस्तुते।।
नमोस्तुते शस्त्र-शास्त्र ज्ञाता।
इच्छित फलदाता नमोस्तुते।।
नमोस्तुते ब्राह्मण कुल वीरा।
जगत रखवारा नमोस्तुते।।
नमोस्तुते बल, बुद्धि दाता।
सुख, सौभाग्य प्रदाता नमोस्तुते।

श्री गणेशाय नमः

प्रथम अध्याय

गणेश वन्दना

प्रथम वन्दना श्री गणपत की
रिद्धि-सिद्धि प्रदाता की,
दीनन की लाज रख्यो प्रभु
सुख मंगल श्री दाता की,
शिव गौरी ललना दुलारे
मोदक लड्डू खावन की,
एक दन्त संग चार भुजा
विघ्न-क्लेश संहारन की॥

इस ग्रन्थ की प्रस्तुति से पूर्व में नतमस्तक हो दोनों हाथ जोड़कर, शुद्ध तथा निर्मल हृदय से श्री गणेश जी की बन्दना तथा स्तुति करती हूँ, जो रिद्धि-सिद्धि को देने वाले हैं, जो दीन-दुखियों के समस्त कष्ट दूर करते हैं। सुख, मंगल, यश तथा धन देने वाले शिवजी तथा मां पार्वती के दुलारे सुपुत्र, जो मोदक लड्डू का भोग लगाते हैं, जिनकी चार भुजाएँ हैं, तथा जो समस्त त्रिलोक में एकदन्त कहलाते हैं, उनकी सदैव जय हो।

सरस्वती वन्दना

जय मां वीणा वादिनी, बुद्धि विद्या जननी।
अतंकरण प्रकाशित कर, ज्ञान-वान निर्मल चित्त करनी॥
काव्य कला की दाती मईया, ब्रहा की वाणी मां कल्याणी।
जय-जय-जय मां सरस्वती, जय-जय-जय जग तारिणी॥
इरा, कादम्बरी, महाश्वेता, विद्या हंसिनी कात्यायिनी।

कालरात्रि, चित्रगन्धा, वीनावाणी, महाभद्रयिनी॥
मेधा, पावकी, श्रद्धा, पद्मनिलाय, शिव अनुयायी।
वागिखरी, महापताका जय मां हंस वाहिनी॥

हे मां सरस्वती मेरी भूल क्षमा करके, मुझ पर अपनी कृपादृष्टि बनाए रखें। आप तो काव्य-कला की देवी हैं। मैंने जो इस ग्रन्थ को रचने की चेष्टा की है, मां मुझे क्षमा करते हुए मेरे इस ग्रन्थ को स्वीकार करें। आप तो अतंस के अंधेरे को दूर करके चित्त निर्मल करने वाली देवी हैं। आपने तो चारों लोकों को ज्ञान के प्रकाश से आलौकित किया है। जहां आपकी कृपा होती है वहाँ अंधकार स्वतः ही समाप्त हो जाता है। मां आप तो ब्रह्म की वाणी से उत्पन्न हुई हैं, जग का कल्याण करने वाली हैं, बुराईयों को समाप्त करने वाली हैं। मां मैं बार-बार आपको नमश्कार करती हूँ।

परब्रह्म वन्दना

परब्रहम परमात्मा हे जगदीश।
दया के सागर हे परमईश॥
हे (रत्त) धर्म निर्माता।
पृथ्वी-जल-वायु अग्नि प्रदाता॥
धन्य किया इस जगत को लेकर के अवतार।
युगों-युगों से करते रहे, दुष्टों का संहार॥
तुम धर्म के संस्थापक, तुम ही धर्म के रक्षक।
तुम ही स्रष्टा, तुम ही पालक, तुम ही जीवन के हो कारक॥
पुरूषोतम में विधमान जीवात्मा, नमन आपको बारंबार।
करके स्वीकार यह ग्रन्थ रत्न, प्रभु मेरा करो उद्धार॥

हे परब्रह्म, सर्वशक्तिमान इस जगत को बनाने वाले, इसका पालन करने वाले जगदीश हे दया, कृपा सिन्धु आपकी जय हो। हे भगवन आपने ही सूर्य, चाँद, सितारे, पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु तथा आकाश का निर्माण

किया हो। आप ही सभी ग्रहों-नक्षत्रों को गति प्रदान करने वाले हैं। जीव-जीवात्मा के जनक आप ही हैं आपसे ही सम्पूर्ण जगत है। आप हर युग में अवतार लेकर पृथ्वी पर आए तथा दुष्टों का संहार करके आपने ही धर्म की स्थापना की तथा उसकी रक्षा की। प्रभु आपने ही हमें बनाया आपने ही पोषण किया तथा आपके कारण ही हम जीवित हैं। आप जो अवतार लेकर धरती के दुखों और कष्टों को दूर करते हैं, वह आपके पुरूषोत्तम की उच्चतम स्थिति होती है। जब आप मानव रूप में अवतार लेते हैं, मानवीय दुखों को हमारे उद्धार के लिए सहते हैं ऐसे परब्रह्म को मेरा बार-बार नमश्कार है। हे प्रभु मैंने जिस ग्रन्थ की रचना करने का प्रयास किया है उसे आप स्वीकार करें। यदि आप इस ग्रन्थ रत्न को स्वीकारेंगे तो निश्चय ही मेरा उद्धार हो जाएगा। हे प्रभु आपकी जय हो।

ब्रहमा, विष्णु, महेश वन्दना

परब्रह्म के तीन रूप हैं ब्रह्मा, विष्णु, म्हेश।
जिनकी वाणी से निकले, वेदों के उपदेश॥
ब्रह्मा स्रष्टा, विष्णु पालक, शिव करते हैं मर्दन।
जीवन चक्र में निहित है, त्रिदेव का संदेश।

सर्वशक्तिमान परब्रहा के तीन प्रकार जिनकी वाणी से वेदों के उपदेश निकले हैं। ब्रह्मा सृष्टि का पालन करते हैं तथा शिवजी संहार करते हैं। इसी प्रकार एक जीवन के जो यह तीन चक्र होते हैं जन्म, पालन, मृत्यु इनको नियमित करने में त्रिदेव का आदेश ही सर्वोपरि रहता है। यदि विचार किया जाए तो इन तीन चक्रों में ही त्रिदेव का संदेश निहित है।

मां गायत्री वन्दना

जय मां गायत्री।
दश भुजा धारी, कुमुद् वाहिनी॥
पंचमुखी - मुक्ता।

विदर्मा, हेम, नील धवन धारिणी॥
जय मां लक्ष्मी, गौरी।
सरस्वती स्वरूपा॥
ब्रह्मा, विष्णु, महेश रूपिणी।
जय मां जग तारिणी॥
वेदमाता विख्याता।
मां चारों वेदों की जननी॥
कमल, परशु, गदा, सुरदर्शन।
शंख, पुस्तक कर धारिणी॥
सुख-समृद्धि प्रदायिनी।
जय मां दुख भंजिनी॥
जय जय मां आदिशक्ति।
जय जग जगदव्यापिनी॥
जय जय मां जगत कल्याणी।
जय जय मां प्रबोधिनी॥
तमस अज्ञान नाशिनी।
अंतम ब्राह्म प्रकाशिनी॥

हे मां गायत्री, दस भुजाओं वाली मां आपका वाहन कमल है। हे मां आपके पाँच मुख हैं, जिनके नाम है मुक्ता, विदर्मा, हेम, नील, धवन। हे माता आप में महा लक्ष्मी महागौरी तथा महा सरस्वती के स्वरूप समाहित हैं। आपमें ब्रह्मा, विष्णु, शंकर तीनों के स्वरूप समाए हुए है आप ही स्रष्टा आप ही पालक तथा आप ही नाश करने वाली हैं आप चारों वेदों की जननी हैं तभी आप वेदमाता कहलाती हैं। आपके हाथों में कमल, परशु, गदा, सुदर्शन, शंख तथा पुस्तक शोभा पा रहे हैं। हे माँ आप समस्त ऐश्वर्य को देने वाली तथा दुखों का नाश करने वाली हैं आप आदिशक्ति हैं और पूरे जगत में आप ही व्यापक हैं। आप जगत का कल्याण करती हैं आप ज्ञान को चारों दिशाओं में फैलाती हैं।

अज्ञानता के अंधेरे दूर करते हुए मन के अंदर तथा बाहर दिव्य ज्ञान से प्रकाशित करती हैं।

सत्गुरू बन्दना

जप, तप, श्रद्धा, भक्ति ध्यान।
सत्य वचन वेद-वेदांत ज्ञान॥
सूक्ष्म-स्थूल, जड़ चेतन का।
परमार्थ हेतु करें व्याख्यान॥
योग, कर्म, भक्ति का संगम।
जन-कल्याण, हेतू जीवन धन॥
ज्ञानमार्ग वरदान आपका।
सतोगुणी स्वरूप सनातन॥
युग-युग में पाए अभिख्यान।
सद्गुणी ब्रह्मर्पण अभिध्यान॥
उर, मन कर्म कल्याण कारी।
पथ प्रर्दशक सुक्रित संज्ञान॥

हे सत्गुरू आपकी जय हो। आप सदैव जप, तप श्रद्धा भक्ति और ध्यान में लीन रहते हैं। सत्य और प्रिय वचन बोलते हैं तथा सभी वेदों का ज्ञान रखते हैं। आप दूसरों का भला करने वाले संगत को सूक्ष्म-स्थूल, जड़ चेतन की व्याख्या सुनाते हैं ताकि वे झूठे संसार के मोह से स्वयं को मुक्त कर सकें। आपके भीतर समस्त योगसमाएं हैं आप कर्म और भक्ति में विश्वास रखते हैं। आप ज्ञान के मार्ग को प्रशस्त करते हैं आप सतोगुणी हैं आपका यह स्वरूप सनातन है। आपने चारों युगो में यश तथा शोहरत पाई है। आपका सदगुणी चिंतन ब्रह्मर्पण है। आपका हृदय, आपका मन तथा आपके कर्म सभी कल्याणकारी हैं। आप धर्मात्मा हैं तथा आपका दिया हुआ ज्ञान सबको नेक राह पर ले जाता है। आपकी सदा ही जय हो।

संत वंदना

दुनिया से मुख मोड़ के सुख दुख में रहे एक समान।
विश्व कल्याण की भावना से करते यज्ञ, योग व ध्यान॥
कष्टों की अग्नि में तपकर स्वर्ण आभा से देदिप्यमान।
निज पुरूषार्थ से ज्ञान का जनहित हेतु करें प्रतिपादन॥

मैं समस्त संतों की वंदना करती हूँ जो दुनिया की झूठी चमक को छोड़कर सुख दुख में एक समान रहते हैं जो विश्व के कल्याण के विषय में विचार करते हैं तथा उसी के लिए यज्ञ, योग और ध्यान में मग्न रहते हैं। जो सोने की भांति स्वयं को कष्टों की अग्नि में तपाकर समाज का मार्गदर्शन करते हैं अपने पुरूषार्थ से ज्ञान अर्जित करके उसके प्रकाश से दूसरों के मन का अंधकार समाप्त करते हैं।

श्री परशुराम बन्दना

बाँकी चितवन तन है विशाला।
कंठ सजे रूद्राक्ष की माला॥
गौर वर्ण तन साजे विभूति।
चन्दन भाल कटि मृगशाला॥
शीश जटा दौ उज्वल नैना।
रेणुका सुत हे भृगुकुल लाला॥
कर्मठ वीर जगत रखवाला।
दया करो सब पर हे कृपाला॥

भगवान परशुराम जी का स्वरूप अति सुन्दर हैं। उन्होंने रूद्राक्ष की मालाएँ धारण की हुई हैं। उनका वर्ण गोरा है तथा पूरे वदन पर विभूति लगाई हुई है मानो ऋषिवर अभी अभी हवन यज्ञ संपूर्ण करके लौटे हो। दूसरों की मंगल कामना के लिए किए गए हवन यज्ञ की विभूति उन्होंने अपने शरीर पर धारण की हुई है। आभाशील मस्तक पर चंदन का तिलक लगाया है तथा श्याम मृगचर्म धारण किया हुआ है। वे शिवजी के परम

प्रिय भक्त हैं। उन्होंने भोलेनाथ की तरह ही शीश पर जटा धारण की हुई है। दिव्य कान्ति से परिपूर्ण उनके नयन अपने भीतर सूर्य के तेज को समेटे हुए हैं जिनकी और साधारण प्राणी के लिए देखना मात्र भी कठिन हो रहा है। वे रेणुका के पुत्र हैं। वे इतने शौर्यवान हैं कि पूरे जगत का रक्षण अकेले कर सकते हैं। हे भगवन आप हम सभी पर कृपा करें तथा हमारी बुद्धि को इतना विवेकशील कर दें कि अपनी उन्नति का मार्ग हम स्वयं प्रशस्त कर सकें।

द्वितीय अध्याय

समय की गति

समय बहुत बलवान होता है। समय चक्र युगों-युंगांतरों से घूमता हुआ अनेका अनेक कलरव देखता है उसने तो युगों के कलरव देखे हुए हैं। कौन जाने यह सृष्टि समय के कलरव देखती है या समय सृष्टि के कलरव। समय ने ब्रह्माण्ड के कमल का अवलोकन किया हुआ है उसने सर्वशक्तिमान परमात्मा से उत्पन्न शक्तियों का विस्तार प्रत्यक्ष देखा हुआ है। उसने भगवान ब्रह्मा के खिले हुए कमल का आनन्द उठाया हुआ है। भगवान शिव के ढमरू की ताल सुनी हुई है तथा भगवान विष्णु के सुदर्शन की धार देखी हुई है। सप्त ऋषि नारद के ज्ञान का आस्वादन किया है तथा समस्त देवियों की शक्तियों का प्रभाव देखा हुआ है।

घटनाएं तो समय के घोड़ों पर सवार हो घटती ही रहती है पीछे छोड़ देती हैं परिणाम। जिस प्रकार पहिया एक ही धुरी पर घूमते हुए भी समस्त मार्ग तय करता हुआ चलता है। उसी प्रकार समय का पहिया भी एक ही धुरी पर घूमता है। परन्तु प्रतिक्षण प्रतिपल वह भिन्न परिवेश में से निकलता है। कुम्हार का चाक एक ही धुरी पर घूमता हुआ भिन्न-भिन्न प्रकार के आकर्षक बर्तन तैयार कर लेता है उसी प्रकार समय भी निरन्तर घूमते हुए युगों-युगों का साक्षी बनता हुआ समाज के निर्माण-पतन का अवलोकन करता हुआ निरंतर चलता रहता है।

समय के सांथ सबका अन्त निश्चित है एक समय ही है जो निरंतर चलता रहा है और आगे बढ़ता रहता है। उसके साथ कोई जब तक चलता है चलायमान है परंतु किसी के रुकने से समय नहीं रुकता।

समय ने अपने आँचल में कई सत्य-असत्य छिपाए रखे। सत्य पल्वित होकर अत्यन्त फला-फूला और असत्य ने समाज को, मानवता को सदैव कलुषित किया। सत्य की शीतल छाया में धर्म पनपता है तथा असत्य की उष्णता से अधर्म का जन्म होता है। समय ने सदैव सत्य की शीतलता को असत्य की उष्णता पर विजय पाते हुए अवलोकन किया है। समय-समय पर परब्रह्म सत्य की तथा धर्म की रक्षा हेतु पृथ्वी पर अवतार लेते हैं। वे ईश्वर होते हुए भी जीवन के संघर्षो को सहर्ष स्वीकार करके मानव समाज में उदाहरण तथा आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

महाभारत के युद्ध में कुरुक्षेत्र की पवित्र भूमि पर भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं अपने श्री मुख से अर्जुन से यह शब्द कहे थे कि जब भी धरती पर धर्म आचरण में कमी होगी और अधर्म आचरण में वृद्धि होगी मैं स्वंय को प्रकट करुगाँ।

अच्छाई की सुरक्षा के लिए, बुराई के विनाश के लिए और धर्म की दृढ़ स्थापना के लिए मैं हर युग में पैदा हुआ हूँ।

चारों युगों में भगवान ने अवतार लेकर धर्म की रक्षा की है सत-युग में प्रथम तीन अवतार हुए हैं यानि मतस्य अवतार, कूर्म अवतार तथा वाराह अवतार। द्वितीय युग त्रेता युग हुआ इस युग में नरसिंह अवतार, वामन अवतार, परशुराम अवतार तथा राम अवतार हुए तृतीय युग द्वापर युग हुआ। इस युग में कृष्ण अवतार तथा बुद्ध अवतार हुए। (उत्तर भारत में बुद्ध को विष्णु का नौवां अवतार माना जाता है जबकि दक्षिण में श्री बलराम को नौंवा अवतार माना जाता है।) भागवत पुराण जी की भविष्य वाणी के आधार पर कलियुग के अन्त में कल्कि अवतार प्रकट होंगे तथा वे अधर्म का नाश करके धर्म की स्थापना करेंगे।

भगवान विष्णु के मुख्य दस अवतार हैं परन्तु दूसरे गौण अवतार मिलाकर कुल 24 अवतार है :- नारद, नर-नारायण, कपिल, दतात्रेय, यज्ञपुरुष त्रहषभदेव पृथु, धन्वंतरी, मोहिनी, व्यास, गजेन्द्र मोक्ष, हयग्रीव, हंसावतार, प्रष्णिगर्भ।

ईश्वर के विभिन्न अवतार

मत्स्य पुराण

गीता दर्शन सबसे गूढ़ रहस्यों को प्रतिपादित करता है। जो कुछ है वह सब श्रीमद भागवत गीता में उल्लेखनीय है ओर जो कुछ गीता में लिखित नहीं है वह कहीं नहीं है भागवत गीता का ज्ञान ही जगतगुरु है भगवान श्री हरि के श्रीमुख से निकले एक-एक श्लोक में ज्ञान की अविरल धारा है। उसमें अर्जुन को आदेश देते समय भगवान ने स्वयं कहा है।

यदा-यदा ही धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थनमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्हम्।।

अर्थात् :- जब-जब पृथ्वी पर धर्म की हानि हुई है या भविष्य में होगी तब-तब मैं अवतार लेकर धर्म की रक्षा करने पृथ्वी पर आऊँगा। अपने इसी वचन को सार्थक करते हुए भगवन सदैव अधर्म की प्रबलता को क्षीण करते हुए धर्म की स्थापना करते हैं।

ईश्वर ने यह रहस्य द्वापर युग में अर्जुन से कहा परन्तु सतयुग में ही उन्होने अवतार लेकर मानवों का पृथ्वी का, देवों का वेदज्ञान का, वनस्पतियों का, ऋषि-मुनियों का हित करना आरम्भ कर दिया था। मत्स्य अवतार उनका प्रथम अवतार है। अठारह महापुराणों में से एक मत्सय पुराण है जिसमें भगवान के मत्स्य अवतार की कथा का विवरण है।

सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग तथा कलियुग इन चार युगों में काल का विभाजन किया गया है एक युग ब्रह्मा का एक दिन होता है। इस प्रकार चार युग ब्रह्मा के चार दिन हुए। युग के अन्तिम चरण में भगवान ब्रह्मा निद्रा पूर्ण करते हैं और जिस समय वे नींद में होते हैं उस समय विष्णु भगवान पृथ्वी की रक्षा करते हैं क्योंकि वे पालन हार है और ब्रह्मा सृष्टि का सृजन करते है। अत: जब वे नींद में होते हैं तब सृजन कार्य बन्द हो जाता है। उस समय सृष्टि पर अधिक संकट छाया रहता है। इसी

प्रकार सतयुग के अन्तिम चरण में जब ब्रह्मा नींद में थे हयग्रीवा असुर निकला उनकी नाक में घुसा उसने उनके वेदों को चुरा लिया तथा समुद्र धरातल पर जाकर छुप गया। भगवान विष्णु ने उसे ऐसा करते हुए देख लिखा वे चिन्तित हो उठे।

वही सत्युग में राजा मनु भगवान के अनन्य भक्त थे। वे विष्णु भगवान को एक वार अपनी आखों से देखना चाहते थे। इसी चाहत के कारण वे हवन-यज्ञ तथा दान आदि करते रहते थे। हजारों वर्षो तक उन्होंने प्रभु की भक्ति की।

भगवान सोच रहे थे कि अब वेदों की रक्षा हेतु क्या किया जाए। तभी उनकी दृष्टि यज्ञ करते हुए राजा मनु पर पड़ी। प्रभु मन ही मन प्रसन्न हो उठे। दूसरे दिन मनु नदी पर तपस्या से निवृत्त हो कर जल को हाथ में लेने लगे तो उनके हाथ में एक नन्ही सी मछली आ गई। मछली मनु की ओर देखकर विनती करने लगी "मुझ पर कृपा करो मेरी रक्षा करो तुम राजा हो तुम्हे ऐसा करना ही पड़ेगा। मुझे इस नदी में मत डालो इसमें बड़ी-बड़ी मछलियां हैं वे मुझे खा जांएगी।" मछली की विनती सुन राजा मनु को उस पर दया आ गई उन्होंने उसे अपने कमण्डल में डाल दिया। भक्ति करने के उपरान्त मनु रात को घर चले गए। प्रातः मछली पुनः कहने लगी बचाओ बचाओ यह पात्र मेरे लिए छोटा है। मैं सांस भी नहीं ले पा रही हूँ। उन्होंने देखा मछली बड़ी हो गई है। उन्होंने उसे दूसरे बड़े पात्र में डाल दिया परन्तु शीघ्र ही वह पात्र भी छोटा पड़ गया। अब और बड़ा पात्र जल भर कर तैयार किया गया। मछली को उसमें डाला पर तुरन्त ही मछली और बड़ी हो गई। अब मनु उसे लेकर उसी नदी में छोड़ने गए। छोड़ते ही मछली नदी से भी बड़ी हो गई। अब उन्होंने उसे दूसरी बड़ी नदी में डाल दिया परन्तु मछली और बड़ी हो गई मनु हैरान हो गए यह सभी प्रकरण देखकर अब उन्होंने मछली को समुद्र में डालने का निर्णय लिया। जैसे ही मछली को समुद्र में डाला मछली के ऊपरी भाग से नारायण प्रकट हुए उन्होंने मनु को दर्शन देकर कहा कि तुम मेरे प्रिय भक्त हो और इसीलिए तुम ही वेदों

की रक्षा के कारण बने। मनु अश्रुपूर्ण नेत्रों से हाथ जोड़कर प्रभु की जय-जय कार करने लगे। जो ईश्वर के अनन्य भक्त होते हैं उन्हें वे सेवा का अवसर अवश्य देते हैं।

भगवान ने मनु से एक विशाल नौका बनाने को कहा। उन्होंने कहा कि नौका में समस्त प्रकार के जीवों के वीज को सुरक्षित रखा जाए। उसमें वनस्पतियों के बीज, ऋषि, मुनि, पशु-पक्षी वासुकि नागों, औषधियों को रखा जाए। मनु ने हाथ जोड़ कर कहा प्रभु ऐसा ही होगा। इसके उपरान्त भगवान अर्न्तध्यान हो गए अव वे पुनः (मत्स्य - 3) सम्पूर्ण मत्स्य रूप में आ गए। शीघ्रता से वे समुन्द्र धरातल पर पंहुचे जहां असुर वेदों सहित छुपा था। विशालकाय मत्स्य को देखकर वह भयभीत हो उठा। भय से वह इधर-उधर भागने लगा परन्तु शीघ्र ही प्रभु के हाथों मारा गया। प्रभु ने उसे मार कर वेदों को ब्रह्मा को लौटा दिया जो कि अभी भी नींद में थे। इस प्रकार उन्होंने वेदों की रक्षा की, यदि वेद नष्ट हो जाते तो दूसरे युगों में वेद ज्ञान कैसे पहुंचता।

दूसरी ओर मनु ने भगवान के कहे अनुसार पर्वत पर एक विशाल नौका बनाकर उसमें सभी वनस्पतियों के बीजों, ऋषि मुनियों, पशु पक्षियों तथा हर प्रकार के बीजों को सुरक्षित रख दिया। प्रभु के अनुसार सात दिन बाद महाप्रलय होनी थी। मत्स्य वेदों को सुरक्षित ब्रह्मा के पास रखकर नौका की ओर आई/अब जल भराव आरम्भ हो चुका था सभी ओर जल ही जल था। मत्स्य ने वासुकि नागों को रस्सी की भांति एक सिरे से नौका को बांधा तथा दूसरा सिरा अपने सींग से बांध दिया इस प्रकार महा प्रलय के समय प्रभु ने मत्स्य रूप धर कर सृष्टि की रक्षा की।

कच्छप अवतार (कूर्म अवतार)

पुराणों के अनुसार कच्छप अवतार भगवान वासुदेव के दूसरे अवतार हुए। यह अवतार सतयुग में हुए। इस अवतार में आने का प्रयोजन था देवताओं को उनकी क्षीण हो चुकी अमरत्वता पुनः लौटाना तथा राक्षस

गणों को निर्बल करके सृष्टि को सुव्यवस्थित करना था।

एक वार महात्रृषि दुर्वासा जो कि रुद्र भगवान शिव के अंश माने जाते हैं वे विचरण कर रहे थे। उन्होंने एक सुंदरी विद्याधरी के हाथ में श्रेष्ठ गन्ध युक्त दिव्य पुष्पों की माला देखी। उन्होंने वह माला उस देवी से मांग ली। विद्याधरी देवी ने वह माला उन्हें दे दी। ऋषि ने वह माला अपने कण्ठ में पहन ली तथा स्वच्छन्द रूप से पृथ्वी पर विचरण करने लगे। उसी समय अपने प्रिय हाथी ऐरावत हाथी पर चढ़कर देवराज इन्द्र आते हुए दिखाई दिए। उन्हे देखकर ऋषि ने दिव्य माला इन्द्र को दे दी। देवराज इन्द्र ने वह दिव्य माला ऐरावत के गले में डाल दी। पुष्प माला की सुगन्ध से मंदोन्मत्त ऐरावत हाथी अपनी सूण्ड से माला को पृथ्वी पर फैंक कर कुचलते हुए चलने लगा यह दृश्य देखकर ऋषि दुर्वासा अत्यन्त क्रोधित हुए। क्रोध से वे भृकुटी तान कर तथा नेत्रों को लाल करके कहने लगे:- अरे अभिमानी इन्द्र तुमने मेरी दी हुई माला का अपमान किया है इसलिए तेरा जो तीनों लोकों का ऐश्वर्य है वह नष्ट हो जाएगा तथा तू श्रीहीन हो जाएगा। जिसके क्रोध से तीनों लोकों के कठोर वचन सुनकर देवराज इन्द्र हाथी से नीचे उतरे तथा उनसे क्षमा-याचना मांगने लगे। तब ऋषि दुर्वासा ने कहा कि तुमने जो दुस्साहस किया है वह क्षमा के योग्य नहीं है और न ही मैं अन्य ऋषियों एवं ब्राह्मणों के समान दयालु हूँ ऐसा कहकर वे चले गए। तत्पश्चात देवराज इन्द्रपुरी चले गए वहाँ जाकर उन्होंने पाया कि समस्त इन्द्रपुरी कान्ति हीन हो चुकी है। सभी देवों की शक्ति समाप्त हो चुकी है। यज्ञ-अनुष्ठान बन्द हो गए। तपस्वियों ने तप तथा दानियों ने दान देना बन्द कर दिया। तीनों लोको का सत्व जब समाप्त हो गया तो असुरों ने देवताओं पर चढ़ाई कर दी। घनघोर युद्ध हुआ तथा देवता पराजित हो गए क्योंकि उस समय असुर बल में अधिक समर्थ थे।

पराजय से विचलित देवगण श्री विष्णु की शरण में आए। ब्रह्मा अन्य देवताओं सहित श्री विष्णु की स्तुति करने लगे।

नमामि सर्व सर्वेशमनन्तमजमव्ययम्।
लोकधाम धराधरम प्रकाशम् मेदिनम्।

अर्थात् :- अणुओं से भी सूक्ष्म और पृथ्वी आदि गुरुओं से भी गुरु, समस्त आधारस्वरूप अभेद्य, सर्वरूप सर्वेश्वर, अनन्त, अज और अव्यव भगवान नारायण को नमश्कार है।

इस प्रकार अनेक विधि से स्तुति किए जाने पर भगवान विष्णु शंख, चक्र, पदम और गदा धारण किए हुए अपने चतुर्भुज स्वरूप में प्रकट हुए। तेजयुक्त उनकी आभा को देखकर सभी आश्चर्यचकित रह गए।

भगवान विष्णु प्रसन्न होकर बोले हे देवताओं तुम सब दैत्यों के साथ मिलकर औषधियां लाकर क्षीरसागर में डाल दो और समुद्र मन्थन करो समुद्र मन्थन हेतु मन्दराचल पर्वत को मथानी तथा वासुकि नाग को नेति स्वरूप उपयोग करो। दैत्यों की सहायता से समुद्र अमृत निकालो। मैं भी सहायता करूंगा तथा समय की नीति देखते हुए दैत्यों से सन्धि कर लो। जब समुद्र मंथन से अमृत निकलेगा तो मैं कुछ ऐसा करूंगा कि दैत्यों को वह प्राप्त न हो सके। तुम सभी अमृतपान करके अमर तथा बलवान हो जाओगे।

सभी ने ऐसा ही किया जैसा प्रभु ने कहा था दैत्यों ने प्रभु की माया से वशीभूत हो स्वयं कहा कि हम वासुकि के मुख की ओर रहेगें तथा देवता लोग पुछ की ओर। जब मंथन आरम्भ हो गया तो वासुकि नाग के मुख से निकलने वाली प्रचण्ड ज्वाला से दैत्यों का तेज हीन होने लगा।

मन्दाराचल पर्वत को आश्रय प्रदान करने के लिए भगवान विष्णु ने कच्छप रूप धारण कर लिया। इसलिए इसे उनका कच्छप अवतार कहा गया।

समुद्र मन्थन से सर्वप्रथम कामधेनु उत्पन्न हुई फिर वारुणी प्रकट हुई फिर पारिजात तथा आप्सराओं की उत्पति हुई उसके बाद चन्द्रमा की उत्पति हुई। जिसे भगवान शंकर ने धारण कर लिया। कई प्रकार की औषधियां

तथा अन्य तत्व निकले। फिर हलाहल विष निकला जिससे तीनों लोकों के प्राणी सन्तप्त होने लगे। देवता और दैत्यों की स्तुति से भगवान शंकर ने वह विष पी लिया तथा वे नीलकंठ कहलाए। तत्तपश्चात् कमल पुष्प पर विराजित श्री लक्ष्मी उत्पन्न हुई। जिसे श्री विष्णु ने ग्रहण किया। उसके उपरान्त श्वेत वस्त्र धारी भगवान धनवन्तरि जी हाथ में अमृत कलश लेकर प्रकट हुए। सभी बहुत प्रसन्न थे। असुर अधिक बलशाली थे अतः वे अमृत कलश छीन कर आपस में अमृत पीने के लिए संघर्ष करने लगे। उसी समय भगवान विष्णु अति सुन्दर नारी का रूप धारण करके प्रकट हुए। उनके रूप सौन्दर्य को देखकर असुर चकित रह गए। मोहिनी नामक सुन्दरी ने दैत्यों को विमोहित कर सारा अमृत देवताओं को पिला दिया। जब दैत्यों को ज्ञात हुआ कि उनके साथ छल हुआ है तो वे क्रोधित होकर अस्त्र-शस्त्र सहित देवताओं से युद्ध करने लगे। अब बलहीन देवता अमृत पान करके बलशाली हो चुके थे अतः युद्धभूमि में दैत्यों की हार हुई। अधिकतर दैत्य मारे गए। जो बचे थे वे अपनी प्राण रक्षा हेतु, इधर-उधर भागने लगे।

देवताओं की विजय हुई वे चक्रधारी भगवान विष्णु को प्रणाम करके स्वर्ग लोक को चले गए।

देश भर में कूर्म अवतार के तीन भव्य मन्दिर है एक आन्ध्रप्रदेश के चत्तूर में स्थित है दूसरा मन्दिर भी यही आन्ध्रप्रदेश के श्री कूर्मम में स्थित है तथा तीसरा मन्दिर है कर्नाटक के चित्रदुर्ग जिला के गवीरन्गापुर नामक स्थान में स्थित है।

वाराह अवतार

श्री नारायण ही सर्वशक्तिमान है। वे ही जगत के निर्माता, पालक तथा संहारक है। वे ही अनादि तथा अचिन्त्य है वे ही सृष्टि की उत्पति के कारक है पुराणों में उनके लिए यह श्लोक लिखित है

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नपसूनवः
अथनं तस्य ताः पूर्व तेन नारायणः समृत।।

अर्थात् जल ही आपका निवास स्थान है। और नर पुरुषोतम से उत्पन्न है इसलिए आपको नारायण कहा जाता है।

नारायण के दस अवतारों में से तीसरे अवतार हैं वाराह अवतार। जिस समय हिरण्यक्ष ने भूदेवी (पृथ्वी) को अपार जलराशि में छुपा लिया उस समय भगवान ने पृथ्वी को जल से बाहर निकालने के लिए वाराह का शरीर धारण कर लिया। वे घर्घर गर्जना करते हुए विशाल दाढ़ों से युक्त क्रोध से लाल लाल आखों वाले वाराह रूपी भगवन पाताल लोक में पहुँच गए। पृथ्वी सन्तप्त हो कर व्याकुल हो रही थी जब उसने उन्हें पाताल लोक में देखा तो वह उन्हें हाथ जोड़कर प्रणाम करके उनकी स्तुति करने लगी।

''नमस्ते पुण्डरीकाक्ष शंखचक्र गदाधर।
मामुध्दारास्मादद्य त्वंडह पूर्वमुत्थिता।।''

अर्थात् :- हे शंखचक्र, गदा, पदम धारण करने वाले भूतेश्वर, आपको नमश्कार है। मैं आपसे पूर्वकाल में उत्पन्न हुई हूँ मेरा उद्दार कीजिए। इस प्रकार पृथ्वी कई प्रकार से दीनदयाल, कालस्वरूप कृपानिधान भगवान श्री नारायण की स्तुति करने लगी, पृथ्वी द्वारा वार-वार स्तुति करने पर श्री नारायण जो वाराह रूप धारण करके सागर तल में उसे लाने के लिए गए थे उन्होंने गर्जना करते हुए उसे अपनी विशाल दाढों से इस प्रकार उठा लिया मानों पृथ्वी कोई कमल पुष्प हो। उनके मुख के श्वास ने ऋषियों को भिगो दिया। जल से भीगे हुए बाराह भगवान अपने वेदमय शरीर को कंपाते हुए जिस समय बाहर निकलते उनकी रोमावली में स्थित मुनिजन उनकी स्तुति करने लगे। भगवान ने विशालकाय पृथ्वी को आपार जलराशि के उपर स्थापित कर दिया। उन्होंने स्थान-स्थान पर पर्वतों को स्थापित किया। सातों दीपों के रूप में पृथ्वी को विभाजित करके भूलोक आदि चार लोकों की कल्पना कर दी। तदनन्तर श्री नारायण ने रजोगुण से युक्त ब्रह्मा जी का रूप धारण करके सृष्टि की रचना की। इस प्रकार परब्रह्म ने वाराह अवतार लेकर पृथ्वी की

रक्षा की।

आन्ध्रप्रदेश के तिरूमला में प्रसिद्ध वाराह स्वामी मंदिर है। यह मंदिर स्वामी पुष्करणी के मंदिरों के एक ओर स्थित है। यह स्थान तिरूपति के पास स्थित है इसी के उत्तर की और तिरूमल वेंकटेश्वर मंदिर है। इस क्षेत्र को आदि-वाराह क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। कथा के अनुसार बैंकटेश्वर ने वाराह से आग्रह किया था कि उन्हे यहाँ पर रहने दिया जाए। इसलिए श्रदालु सर्वप्रथम वाराह भगवान के दर्शन करते हैं इसके उपरान्त वे वैंकटेश्वर जाते हैं। अत्री संहिता के अनुसार वाराह भगवान तीन रूपों में पूजे जाते हैं आदि वाराह, प्रलय वाराह तथा यज्न वाराह।

भूवाराहस्वामी मंदिर, श्री मुश्नाम कस्बा चिदम्बरम के उतर पूर्व की ओर स्थित है इसका भी बहुत महत्व है यह क्षेत्र तामिल नायडू में पड़ता है। इसका निर्माण 16वी शताब्दी में कृष्णाप्पा द्वारा किया गया। इस मंदिर में भगवान के दर्शन स्वयंभू स्वरूप में दिखाए हैं। तामिल माह मसीं (फरवरी से मार्च तक) पर यहां एक विशाल उत्सव होता है यह उत्सव हिन्दु तथा मुस्लिम मिलकर मनाते हैं। मुस्लिम समुदाय के लोग इन्हे वाराह साहिब कहते हैं। कामाक्षी मन्दिरों के पास भी इनका एक सुन्दर मंदिर है, मुरादपुर, प० बंगाल में भी वाराह भगवान का विशाल मंदिर है इसका निर्माण 8वी सदी में हुआ था।

इसके अतिरिक्त समस्त भारत में वाराह मंदिर है जैसे हरियाणा, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, ओडीसा, राजस्थान के पुष्कर में तथा उत्तर प्रदेश में।

नृसिंहावतार

इस संसार की सृष्टि और प्रलय के स्वामी, जिनका न आदि है, न मध्य है और न ही अन्त वे भगवान विष्णु चौथी वार नृसिंहावतार में भूलोक पर अवतरित हुए।

पुराणों के अनुसार प्राचीन समय ब्रहमा के परम् भक्त हिरण्यकशिपु हुए। वे महात्मा कश्यप की स्त्री दिति के गर्भ से उत्पन्न हुए। ब्रहमा ने उसकी भक्ति पर प्रसन्न होकर उसे कोई वर माँगने के लिए कहा। उसने अमरत्व का वर मांगा ब्रह्मा ने कहा ऐसा नहीं हो सकता। अन्त तो होना ही है कुछ और मांग लो। तब उसने यह वर मांगा कि वे किसी ऐसे प्राणी का निर्माण न करें जो उसका वध कर सके। उसकी मृत्यु न भीतर हो, न बाहर। वह किसी भी अस्त्र-शस्त्र से न मरे। न वह दिन को मरे न रात्रि में। श्री ब्रह्मा ने कहा तथास्तु। अब वह अपार शक्ति का स्वामी था और उसे विश्वास था कि वह कभी मृत्यु को प्राप्त नहीं होगा। उसने इन्द्रपद छीन लिया तथा उस पर आसीन होकर स्वयं सूर्य, अग्नि, वायु, वरुण, चन्द्रमा, कुबेर तथा यमराज बन बैठा। उसका अति भाग्यशाली पुत्र प्रह्लाद गुरुओं के पास जाकर शिक्षा ग्रहण करने लगा। कुछ समय के अन्तराल में वह बालक एक दिन अपने गुरुओं के साथ अपने पिता से मिलने आया। अपने पिता के चरणस्पर्श करके उनसे बातें करने लगा। पिता ने उसे कण्ठ से लगाकर पूछा हे पुत्र! अपने गुरुओं के साथ रहकर तुमने आज तक जो भी शिक्षा ग्रहण की है उसका मूल मुझे सुनाओ। तब पुत्र प्रह्लाद ने कहा पिता श्री सर्वशक्तिमान, सनातन, अजन्में अच्युत, अनन्त, सर्वेश्वर, सर्वज्ञ भगवान विष्णु को मैं प्रणाम करता।

प्रहलाद के वचन सुनकर हिरण्यकश्यप क्रोध से कांप उठा। उसने गुरुओं को क्रोधयुक्त वचन कहे। गुरुजन हिरण्यकश्यप से क्षमा मांगते हुए कहने लगे कि उन्होंने उसे यह सब सिखाया ही नहीं है। तब क्रुद्ध होकर हिरण्यकशिपु ने कहा इस मूर्ख बालक को मेरी दृष्टि से दूर ले जाओ और गुरुओं को कठोर शासन के निर्देश दें दिए गए।

बहुत दिन बीत जाने के उपरान्त दैत्यराज हिरण्काशिपु ने पुनः प्रहलाद को बुलवाकर अर्जित ज्ञान के विषय में पूछा। परन्तु उसने फिर से भगवान की स्तुति करना आरम्भ कर दी। इस पर उस दैत्य को अत्यन्त क्रोध आया तथा उसने अपने अधीन दैत्यों को उसका वध करने के लिए

कहा परन्तु निष्फल रहे। उसके बाद सर्पों को आदेश दिया गया कि वे उसे डसें परन्तु उनका विष भी निष्क्रिय हो गया। एक के बाद एक कठोर यातानांए देने का आदेश दिया गया परन्तु ईश्वर भक्त को कुछ नहीं हुआ वे न तो अग्नि से जले, न उन्हें ऊंचे पर्वत शिखर से गिरने के उपरान्त कुछ हुआ। दैत्यगुरुओं ने उन पर हवनकुण्ड से निकली भयंकर राक्षसी कृत्या से आक्रमण करवाया, रसोईयों ने उन्हें हलाहल विष पान करवाया परन्तु हर प्रकार से सुरक्षित रहे।

तब दैत्यों ने हिरण्यकशिपु से कहा आप व्यर्थ ही इस पर क्रोधित हो रहे हैं। आपके क्रोध के पात्र तो वे देव हैं जिनकी यह स्तुति कर रहा है। इसे ऐसी शिक्षा दिलवाएं कि यह देवताओं का शत्रु हो जाए। हिरण्यकश्यप ने गुरुओं को ऐसा ही करने का आदेश दिया। वे उसे शिक्षा देने लग पड़े। कुछ समय बाद हिरण्यकश्यप ने प्रहलाद से शिक्षा तथा ईश्वर के विषय में पूछा तो तब भी प्रहलाद ने वैसा ही उतर दिया कि ईश्वर ब्रहमाण्ड के कण-कण में समाए हैं। हिरण्यकश्यप को अत्यन्त क्रोध आया उसने उसे कई प्रकार की यातनाएं दीं। परन्तु प्रहलाद को कोई हानि नहीं पहुंची। प्रहलाद ईश्वर स्तुति करते रहे। हिरण्यकश्यप ने प्रह्लाध से पूछा कि तुम कहते हो कि भगवान प्रत्येक स्थान पर है, कण-कण में हैं बताओं क्या इस खम्बे में भी तुम्हारे भगवान हैं। प्रहलाद ने कहा हां प्रभु हर जगह है दैत्य हिरण्यकशिपु ने अन्य दैत्यों को वह खम्भ्रा ध्वस्त करने को कहा। जैसे ही दैत्यों ने खम्भे पर प्रहार किया उसमें से ईश्वर नृहसिंह रूप में प्रकट हुए नृसिंह अर्थात् आधे नर तथा आधे सिंह रूप में। ईश्वर ने हिरण्यकश्यप को उठा कर अपनी जंघाओं पे रखा तथा अपने नखों से उस दैत्य की देह फाड़ डाली यह सभी प्रकारण द्वार पर हुआ अर्थात् वे उस समय न महल के भीतर थे न बाहर। उस दैत्य को किसी अस्त्र से नहीं बल्कि नखों से मारा, उस समय न दिन था और न ही रात थी।

इस प्रकार ईश्वर ने पृथ्वी पर से इतने बड़े भार को हल्का करते

हुए देवताओं को उनका स्वर्ग पुनः लौटा दिया तथा सृष्टि सभी कार्य सुव्यवस्थित हो गए।

प्रहलाद से प्रभु ने वर मांगने को कहा तो उसने यह वर मांगा कि हे प्रभु आपकी कृपा से मेरी भक्ति सदैव आप में बनी रहे। इस पर प्रभु बोले मेरी कृपा से तुझे परम निर्वाणपद प्राप्त होगा। यह कहकर प्रभु अन्तर्ध्यान हो गए।

वामन अवतार

विष्णु भगवान के पांचवे अवतार वामन अवतार हुए। वे कश्यप के तथा अदिती के पुत्र थे। इनकी उत्पत्ति त्रेतायुग के आरम्भ में हुई। इससे पहले भगवान विष्णु ने मानव रूप में कभी अवतार नहीं लिया था। मनुष्य रूप में यह उनका प्रथम अवतार है। यह बौने ब्राह्मण के रूप में प्रकट हुए थे। दक्षिण भारत में इन्हें उपेन्द्र के नाम से भी जाना जाता है। ऐसा माना जाता है कि वे देवराज इन्द्र के छोटे भाई थे। वह आदित्यों में बारहवें थे अर्थात् ऋषि कश्यप की दूसरी पत्नी अदिती के बारह पुत्र थे और यह उनके 12वे पुत्र थे।

पुराणों के अनुसार भगवान विष्णु ने इन्द्र का देवलोक में पुनः अधिकार स्थापित करने के लिए यह अवतार लिया। देवलोक असुर राजा बली ने हड़प लिया था। राजा बलि अत्यन्त बलशाली असुर था। वह एक दयालु तथा दानप्रिय राजा असुर था। उसकी दानवीरता की विशेषता को सभी जानते थे। वह मावेली विरोचन और दोवाम्बा का पुत्र था। तपस्या तथा बल के माध्यम से उसने देवताओं से अनेकों वरदान प्राप्त किए थे। उसे त्रिलोक का आधिपत्य प्राप्त हो गया था। इससे वह अहंकारी हो गया था इसके इसी दंभ तथा अहंकार को भंग करने के लिए भगवान को वामनावतार लेना पड़ा। राजा बलि प्रह्लाद के पोत्र थे। वामन एक बौने ब्राह्मण के रूप में बली के पास गए ओर उनसे अपने रहने के लिए तीन कद़म के बराबर भूमि देने का आग्रह किया। उनके

हाथ में एक लकड़ी का छाता था। राजा बली ने सोचा कि यह बौना ब्राह्मण इसके तीन नन्हें - नन्हें कदम होगें तो वह मान गए। गुरु शुक्राचार्य को संदेह हुआ उन्होने बली को चेताया भी परन्तु बली ने उन्हे वचन दे दिया था।

तत्पश्चात् बामन ने अपना आकार इतना विशाल कर दिया कि भूमि को मापते समय पहले ही कदम में समस्त भूलोक को नाप लिया। दूसरे कदम में देवलोक को माप दिया। अब तीसरे कदम के लिए कोई स्थान नहीं शेष बचा था। वचन के पक्के माने जाने वाले बली ने तीसरे कदम के लिए अपना शीश प्रस्तुत कर दिया। बामन बली की वचनबद्धता से अति प्रसन्न हुए। वामन ने प्रसन्न होकर बली को पाताल लोक देने का निर्णय लिया। बली के दादा जी भगवान विष्णु के परम भक्त थे। उन्होंने अपना तीसरा कदम बली के सिर पर रखा परिणामस्वरूप बली पाताल लोक में पहुंच गया। भगवान के चरणों के स्पर्श से बली को अमरत्व प्राप्त हुआ। भगवान विष्णु ने अपने विराट रूप के बली को दर्शन दिए प्रभु के दर्शन से राजा बली अति प्रसन्न हुआ। अब प्रभु ने उसे महाबली की उपाधि प्रदान की।

भगवान श्री विष्णु ने वामनावतार रूप में बलि को अमरत्व प्रदान करके उसका उद्धार किया तथा यह पाठ दिया कि अहंकार से कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता है। ऐसा माना जाता है कि ईश्वर के दिए वरदान के कारण प्रतिवर्ष बली धरती पर आते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि उनकी प्रजा खुशहाल है कि नहीं।

भारत में मध्यप्रदेश राज्य के जिला खजुराहो में वामन मंदिर है यह ब्रह्मा मंदिर से कुछ ही दूरी पर स्थित है इसका निर्माण लगभग 1050-75 में हुआ। इसके अतिरिक्त केरल में एक वामन मंदिर है। वहां पर ओणम त्योहार भी भगवान विष्णु तथा राजा बली की कथा के लिए श्रद्धा भाव रखते हुए मनाया जाता है। कोचि में स्थित थरीकक्करा मंदिर अत्यन्त सुन्दर है। थरीकक्करा का अर्थ है वह पवित्र स्थान जहां भगवान

अपने कदम रखते हैं।

दक्षिण में मीथरानन्दपुरम वामन मन्दिर है जो थ्रिसुर जिला में स्थित है। यह एक प्राचीन मन्दिर है। अनकुड्डी घिरूवन्तपुरम वामन मन्दिर थिरूवन्तपुरम में स्थित है। यहां पर वामनावतार की सुन्दर प्रतिमा है। यहां पर प्रतिवर्ष आठ दिन उत्सव चलता है।

इसके अतिरिक्त चेलामट्टम वामन मंदिर, कालाट्टू वामननूर्ति मंदिर, थेलकड्डुवामन मूर्ति मंदिर, मेवलर वामन मूर्ति मंदिर, चेत्तरिक्कल विष्णु मंदिर थिरीविक्रम मंगलम महाविष्णु मंदिर, तरीविक्रम मंदिर तथा सुचिन्द्रम स्थानमाल्या पेरुमल मंदिर कन्या कुमारी में स्थित है।

श्री राम अवतार

पुराणों के अनुसार पाप, सन्ताप और शोक का नाश करने वाले सभी गुणों से युक्त, ज्ञान, वैराग्य तथा योग के सत्गुरु तथा परमधाम देने वाले श्री हरि ने पृथ्वी के दुखों के भार को हल्का करने के लिए सातवां अवतार श्री रामचन्द्र के रूप में लिया। इस अवतार में उन्होंने अपने चरित्र द्वारा भूलोक पर एक आदर्श जीवन की स्थापना की तथा समस्त भूवासियों का मार्गदर्शन किया। महाराक्षस राजा रावण का वध करके धरती पर धर्म की स्थापना की। ईश्वर अपनी बनाई हुई सृष्टि से धर्म की अल्पता या धर्म का नाश कदापि नहीं होने देते।

श्रीराम अवतार त्रेतायुग में हुए ईश्वर की लीला को समझ पाना सहज नहीं है। जहां एक ओर रामायण में श्रीरामचन्द्र को शिवजी का विधीवत पूजन करते हुए दिखाया गया है वही दूसरी और शिवजी के श्रीमुख से श्रीराम कथा वाचन का उल्लेख प्राप्त होता है। पुराणों के अनुसार श्रीराम चरित्र के रचनाकार शिवजी ही हैं।

श्रीरामचरित मानस के लेखक श्री तुलसीदास जी के अनुसार सर्वप्रथम राम कथा श्री शंकर जी ने माता पार्वती जी से कही। मां पार्वती को बीच

में ही नींद आ गई तथा वह सो गई। वही पास में बैठा एक कबूतर का जोड़ा यह कथा सुन रहा था। उन्होंने यह कथा ध्यान से सुनी तथा वे अमर हो गए। आज भी वह कबूतर जीवित हैं तथा पवित्र मन-बुद्धि के स्वामी श्रद्धालुओं को उनके दर्शन होते हैं।

एक अन्य उल्लेख के अनुसार वही चरित्र शिवजी ने काक भुशुण्डिजी को रामभक्त जानकर सुनाया। काकभुशुण्डिजी ने यह कथा याज्ञवल्कयजी को तथा भरद्वाज जी को सुनाई। भगवान के मुख से निकली यह कथा अध्यात्म रामयण के नाम से प्रसिद्ध हुई। बाद में इसी वृत्तान्त को महर्षि वालमीकि जी ने श्लोकबद्ध किया तथा यही कथा बालमीकि रामायण कहलाई।

बालकाण्ड

आयोध्या नगरी के राजा दशरथ की तीन रानियां थी कौशल्या, सुमित्रा तथा कैकई। पुत्र प्राप्ति हेतु उन्होने अपने गुरु श्री वशिष्ठ की आज्ञा से पुत्रेष्टि यज्ञ करवाया। यज्ञ की खीर के सेवन से निश्चित समय पर कौशल्या के गर्भ से श्रीराम, सुमित्रा के गर्भ से लक्ष्मण और शत्रुघन तथा कैकेयी के गर्भ से भरत का जन्म हुआ।

राजकुमारों के थोड़ा बड़े होने पर शिक्षण - प्रशिक्षण हेतु ऋषि विश्वामित्र श्रीराम और लक्ष्मण को अपने साथ ले गए जहां श्रीराम ने ताड़का तथा सुबहु का वध कर दिया लक्ष्मण ने उनकी समस्त सेना का संहार कर दिया। वही दूसरी और धनुषयज्ञ हेतु राजा जनक के निमन्त्रण पर विश्वामित्र श्री राम लक्ष्मण को लेकर मिथिला आ गए। रास्ते में आहिल्या का उद्धार किया। शिवधनुष तोड़कर सीता से विवाह किया। भरत का माण्डवी से लक्ष्मण का उर्मिला से शत्रुघ्न का कीर्ति से विवाह सम्पन्न हुआ।

अयोध्याकाण्ड

राजा दशरथ श्री राम का राज्यभिषेक करना चाहते थे इस पर देवतागण

चिन्तित हो उठे कि राम राजकाज में व्यस्त हो गए तो रावण के साथ अन्य राक्षसों का वध कौन करेगा। उन्होंने मां सरस्वती से अनुरोध किया। सरस्वती जी ने कैकेई की दासी मन्थरा का हृदय परिवर्तन कर दिया। मन्थरा ने कैकेई के कान भरे कि राम को राज्य क्यों भरत को क्यों नहीं। कैकेई कोपभवन में चली गई। दशरथ के मनाने पर कैकेई ने राजा दशरथ से वरदान में श्री राम के लिए 14 वर्ष का वनवास मांग लिया। इसके उपरान्त श्री राम सीता तथा लक्ष्मण वन की ओर चले गए। ऋंगवेरपुर में निषादराज गुह ने तीनों की भक्तिभाव से सेवा की। केवट उन्हे गंगा नदी के पार ले गए उसके उपरान्त वाल्मीकि ऋषि के आग्रह पर वे चित्रकूट में निवास करने लगे। अयोध्या में पुत्र वियोग से राजा दशरथ की मृत्यु हो गई भरत ने अयोध्या के राज्य को अस्वीकार कर दिया तथा श्रीराम को मनाने हेतु वे अन्य साथियों सहित चित्रकूट में पहुँच गए। श्री राम ने पिता की अवज्ञा करने से भरत को मना कर दिया भरत श्रीराम की चरणपादुकांए लेकर अयोध्या लौट आए। उन्होंने श्रीराम की पादुकाओं को सिंहासन पर रखा तथा स्वयं सेवक की भांति प्रजा पालन करने लगे।

अरण्यकाड

श्री राम ने चित्रकूट से प्रस्थान किया वे अत्रिऋषि, अनुसूया, शरभंग, मुनि, सतीक्ष्ण, अगस्त्य आदि ऋषियों से भेंट की। दण्डक वन में उन्होंने जटायु से भेंट की अब वे पंचवटी में रहने लगे। पंटवटी में रावण की बहन शूर्पणखा आ गई तथा श्री राम जी के रूप तथा यौवन से मोहित हो उठी। श्रीराम ने उसे लक्ष्मण के पास भेज दिया। लक्ष्मण ने शत्रु की बहन जान उसके नाक-कान काट डाले। शूर्पणखा ने जाकर खरदूषण को अपनी व्यथा सुनाई। तत्पश्चात खरदूषण ने अपनी सेना सहित उन पर आक्रमण किया परंतु श्री राम लक्ष्मण ने उन सभी का संहार कर दिया।

शूर्पणखा ने तब यब वृतान्त अपने बड़े भाई रावण से कहा। रावण ने अपने मामा मारिच को स्वर्णमृग बनाकर पंचबटी की कुटिया में भेज दिया। सीता ने मृग पर मोहित हो उसे पाने की इच्छा श्री राम से व्यक्त

की। श्री राम लक्ष्मण को सीता की सुरक्षा की आज्ञा देकर स्वयं मृग के पीछे चले गए। श्री राम ने मृग को जैसे ही तीर मारा स्वर्णमृग मारिच के रूप में आ गया तब श्री राम को राक्षसी माया का आभास हुआ मरते-मरते मारिच ने राम की ध्वनि में लक्ष्मण को सहायता के लिए पुकारा। वहीं दूसरी और सीता राम की ध्वनी सुन चिन्तित हो उठी उन्होंने लक्ष्मण को श्रीराम की सहायता हेतु भेज दिया। उधर सीता के अकेले होते ही मायवी राक्षस रावण ने सीता का हरण कर लिया। रास्ते में सीता को बचाने के लिए जटायु ने रावण से युद्ध किया। रावण ने उसके पंख काट कर उसे अधमरा करके चल गया। जटायु ने राम को अपनी ऐसी दशा का कारण रावण को बताया उसने यह भी बताया कि रावण ने ही सीता का हरण किया है तथा वह उन्हे दक्षिण की और ले गया। ऐसा कहकर उसकी मृत्यु हो गई। श्री राम ने जटायु का दाहसंस्कार किया तथा सीता की खोजबीन में वे सघन वन में आ गए। वहां ऋषि दुर्वासा के श्राप से राक्षस बने गन्धर्व कम्बन्ध का बध करके उसका उद्धार किया तथा तब वे शबरी की कुटिया में पहुँचे तथा श्रद्धा अथवा प्रेम के वश हो कर उसके झूठे बेर खाए।

किष्किन्धाकाण्ड

तत्तपश्चात ऋयमूक पर्वत पर श्री राम की भेंट सुग्रीव से हुई। सुग्र।व ने हनुमान को श्रीराम तथा लक्ष्मण के विषय में जानने हेतू भेजा। श्रीराम भक्त हनुमान ने अपने प्रिय प्रभु को पहचान लिया तथा उनकी मित्रता सुग्रीव से करवा दी। श्री राम ने सुग्रीव के शत्रु बाली का वध करके सुग्रीव को किष्किन्धा राज्य का राजा तथा बालि के पुत्र अंगद को युवराज का पद दे दिया।

सुग्रीव ने एक वानर दल को सीता की तलाश के लिए भेज दिया। वानरों को एक गुफा में एक तपस्विनी मिली उसने उन्हें समुद्र तट पर सम्पाती से मिलवाया। सम्पाती से उन्हें ज्ञात हुआ कि समुद्र पार रावण की स्वर्ण लंका है रावण ने सीता को वहीं पर स्थित अशोक वाटिका

में रखा है। जामबन्त भी श्री राम की सहायता हेतु हनुमान के साथ मिलकर समुन्द्र लांधने के उपाय सोचने लगा।

सुन्दरकाण्ड

किसी प्रकार से हनुमान लंका में पहुंच गए। वहां उन्होंने छाया पकड़ने वाली राक्षसी का वध किया। किसी प्रकार से वे लंका की अशोक वाटिका में पहुँच गए। रावण उस समय सीता से वार्तालाप कर के उन्हें धमका रहा था। रावण के जाने के बाद संतप्त सीता जी को उनकी सेवा हेतू रखी गई राक्षसी त्रीजटा सांत्वना दे रही थी। एकांत पाते ही हनुमान ने सीता को श्रीराम की मुद्रिका दी। तत्पश्चात हनुमान ने अशोक वाटिका का विंध्वस किया। मेघनाद ने हनुमान को बांधकर रावण दरबार में प्रस्तुत किया। रावण की आज्ञा से हनुमान की पूँछ में आग लगा दी गई हनुमान ने अपनी पूँछ से समस्त लंका को जला डाला तथा रावण के पुत्र अक्षय कुमार का वध कर डाला। इस बीच हनुमान भी भेंट विभीषण से भी हुई। सीता माता ने हनुमान को चूड़ामणि दी। हनुमान वापिस श्री राम के पास लौट आए। श्रीराम को हनुमान के कार्य से अति प्रसन्नता हुई। विभीषण के रावण को श्रीराम के विरुद्ध चलने से मना करने पर रावण ने उसे अपने राज्य से निकाल दिया। विभीषण श्री राम की शरण में आ गया।

श्री राम ने समुद्र से रास्ता मांगा समुद्र के मना करने पर श्रीराम ने क्रोधित हो धनुष पर तीर चढ़ाया तो समुद्र क्षमा याचना करते हुए पीछे हट गया तथा उन्हें नल और नील के द्वारा पुल बनाने का उपाय बताया।

लंकाकाण्ड

जामबन्त के आदेश से वानर सेना ने नल और नील दोनों भाईयों के साथ मिलकर समुद्र पर सेतु बांधा। भगवान राम ने श्री शंकर की पूजा अर्चना की। यही स्थान रामेश्वर के नाम से जग प्रसिद्ध हुआ। पूजा अर्चना के पश्चात श्री राम, लक्ष्मण तथा अन्य सेना सहित समुद्र पार पहुँच गए। राम के आगमन के समाचार से रावण व्याकुल हो उठा परन्तु

उसका अहंकार उसके विवेक पर भारी पड़ रहा था उसकी पत्नी मंदोदरी ने उसे समझाया कि वह श्रीराम से युद्ध न करें और सीता को लौटा दे परन्तु वह नहीं माना।

श्री राम वानर सेना सहित सुबेल पर्वत पर स्थित हुए। अंगद राम दूत बन कर लंका में रावण से मिले तथा उसे प्रभु शरण में आने के लिए कहा परन्तु वह अहंकारी नहीं माना।

युद्ध छिड़ गया। लक्ष्मण और मेघनाथ के मध्य घोर युद्ध हुआ। ब्रहमास्त्र से लक्ष्मण मुर्षित हो गए। सुषेण वैघ ने लक्ष्मण के उपचार हेतु संजीवनी लाने को कहा तो श्री हनुमान पूरा पर्वत ही उठा कर ले आए। सुषेण के उपचार से लक्ष्मण स्वस्थ हो गए।

रावण ने युद्ध के लिए कुम्भकर्ण को गहरी नींद से जगाया। उसने भी रावण को श्री राम शरण में जाने के लिए कहा परन्तु रावण अपने निश्चय पर अडिग खड़ा था। राम के हाथों कुम्भकर्ण का उद्धार हुआ। लक्ष्मण ने मेघनाथ का बध किया और अन्त में रावण श्रीराम के हाथों मारा गया। विभीषण को लंका का राजा बनाकर श्री राम सीता लक्ष्मण और हनुमान सहित पुष्पक विमान पर सवार हो अयोध्या पहुँच गए।

उत्तरकाण्ड

अयोध्या में श्री राम का भव्य स्वागत हुआ। भरत सर्वाधिक आनन्दित हो रहे थे। वेद स्तुति तथा शिव स्तुति के साथ प्रभु का राज्याभिषेक हुआ। राम ने प्रजा को सुन्दर उपदेश दिया। चारों भाई अपनी माताओं तथा परिवार सहित सुखपूर्वक रहने लगे। प्रजा अति प्रसन्न थी श्रीराम राज्य ने एक उत्तम आदर्श प्रस्तुत किया। कई वर्षो तक सुखपूर्वक सूर्यवंशी राज चलता रहा।

महाऋषि वालमीकि ने इसके आगे और कई कथाएं रामायण में दी हैं। आगे लव-कुश का जन्म हुआ। इससे पूर्व राम द्वारा सीता की अग्नि

परीक्षा, एक धोबी के वाच्य पर सीता को वनवास, वहां पर रहकर लव-कुश का जन्म आदि का वर्णन है। वहीं दूसरी और श्री राम का सीता की विरह में तड़पना, उनकी तलाश में अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान करना तथा इस यज्ञ में उनके पुत्रों लव-कुश द्वारा वाल्मीकि रचित रामायण गायन करना वर्णित है। अन्त में लवकुश अश्वमेघ का घोड़ा पकड़ लेते हैं उन बालकों को श्री राम पहचान कर हृदय से लगा लेते हैं तथा सीता के पास उसे लेने के लिए जाते हैं परन्तु सीता धरती माता से विनती करती है कि वह उसे अपने भीतर छुपा ले इस प्रकार माता सीता धरती में समा जाती हैं।

श्रीकृष्णावतार

पुराणों के अनुसार द्वापर युग में भगवान श्री विष्णु के अंशावतार हुए। राजा देवक की पुत्री देवकी का विवाह वसुदेव से हुआ। देवकी का भाई कंस उनकी विदाई के समय उनका सारथी बना। वह रथ लेकर जा ही रहा था कि आकाशवाणी हुई हे कंस जिस बहन को तू ससुराल पहुँचाने जा रहा है इसी देवकी के आठवीं सन्तान के हाथों तेरी मृत्यु होगी। तब कंस क्रोध से खड़ग निकालकर देवकी का वध करने के लिए आगे बड़ा परन्तु वसुदेव ने उसे रोक कर कहा कि ऐसा करने की आवश्यकता नहीं है वह अपनी होने वाली सभी संतान कंस को सौंप देगा। सत्यवादी वसुदेव के वचन सुनकर कंस ने देवकी का वध तो नहीं किया परन्तु उसने उन्हें बन्दीगृह में बन्धक बना कर रख दिया।

वसुदेव समय-समय पर अपने छः पुत्रों को कंस को सौंपते रहे। प्रभु की प्रेरणा से योगनिद्रा उन्हें क्रमशः गर्भ में स्थित करती रही। वह योग निद्रा ही श्री नारायण की महामाया है। उससे श्री प्रभु बोले हे योगमाया! पाताल में स्थित छः गर्भों को एक-एक कर देवकी की कोख में स्थापित कर दे। कंस द्वारा मारे जाने पर 'शेष' नामक मेरा अंश देवकी की कोख से निकाल कर वसुदेव की दूसरी स्त्री रोहिणी के गर्भ में ले जाकर स्थापित कर दें। संसार यही मानेगा कि देवकी का सातवां गर्भ

गिर गया। वह सातवां गर्भ संसार में संकर्षण के नाम से प्रसिद्ध होगा। तत्पश्चात आठवें गर्भ के रूप में देवकी के गर्भ में स्थित होऊंगा तथा तू यशोदा के गर्भ में चली जाना। वर्षा ऋतु भद्रपद कृष्ण अष्टमी को मैं जन्म लूंगा और नवमी को तू उत्पन्न होना। उस समय मेरी प्रेरणा से वसुदेव जी मुझे यशोदा के घर पहुँचाकर तुझे देवकी के पास ले आएंगे तब कंस तुझे पकड़कर शिला पर पटक कर मारने का प्रयास करेगा तू उसके हाथ से छूटकर आकाश में स्थित हो जाएगी। तू ही शुम्भ-निशुम्भ आदि कई बलशाली दैत्यों को मारकर सम्पूर्ण पृथ्वी पर कई नामों से पूजित होगी। जो प्राणी प्रात: काल तुझे आर्या, दुर्गा, वेदगर्भ, अम्बा, अम्बिका, भद्रा, भद्रकाली आदि नामों से तेरी स्तुति करेंगे उनकी समस्त कामनाएं पूर्ण होंगी तथा वे पृथ्वी पर गौरवशाली जीवन जी कर मोक्ष को प्राप्त होंगे।

समय आने पर वैसा वैसा ही हुआ जैसे प्रभु ने योगमाया से कहा था। जगत-कल्याण हेतु श्री हरि देवकी के गर्भ में प्रविष्ट हुए और उन्हीं की आज्ञा से यशोदा के गर्भ में योगमाया स्थित हुई। समस्त विभूतियों को अपने गर्भ में स्थित किए हुए देवकी का मुखमण्डल आभाशील हो गया। चहुँ ओर दिव्य प्रकाश सा फैल गया पृथ्वी मंगल गीत गुनगुनाने लगी प्रकृति मदमस्त हो उठी जल धाराएं मदोउन्मत्त हो उठी। ग्रह-नक्षत्र तारागण मस्ती में झूम उठे। ऐसे वातावरण में मानों मन की गहराईयों से निम्न पद प्रस्फुटित हो उठे :-

कंस के जुल्मों सितम की
खतम कहानी होनी थी
ऋषियों की तपोभूमि में
असुरों की मनमानी थी
जंजीरों में जकड़ी देवकी मईया
करने युगप्रवर्तन चली थी
मथुरा की गलियों में आज

मदमस्त पवन बहने लगी थी।।
प्रकृति झूमती गाती आज
करके बैठी थी श्रृंगार
आज जग की रक्षा हेतु
आ रहे थे जग पालनहार

समय आने पर देवकी ने श्री कृष्ण को जन्म दिया तब बन्दीगृह में उजाला ही उजाला हो गया। वसुदेव की हथकडियां खुल गई। सभी पहरेदार सो गए। अर्द्ध रात्रि के समय वसुदेव उन्हे लेकर कारागृह से बारह निकले। अत्यन्त भीषण वर्षा से बचने के लिए श्री शेषनाग अपने फणों को फैलाकर उनके पीछे-पीछे चलने लगे। बिना किसी बाधा के वसुदेव श्रीकृष्ण को लेकर भंवरों से युक्त यमुना को पार करके यशोदा के पास ले गए। उधर यशोदा ने उसी समय कन्या को जन्म दिया था। वसुदेव श्री कृष्ण को यशोदा के पास लिटा कर कन्या को लेकर वापिस आ गए। यशोदा की जब निद्रा टूटी तो वह कमल के समान नयन वाले श्री कृष्ण को देखकर प्रसन्न हो उठी। उधर वसुदेव कन्या को लेकर कारागृह में पंहुचे तो वहां सब कुछ पूर्ववत हो गया। वसुदेव कढ़ियों में जकड़ गए। कन्या के रोने से पहरेदार जाग उठे और संतान उत्पन्न होने की सूचना कंस को दे दी। कंस ने कारागृह जाकर देवकी के हाथ से वह कन्या छीन ली। देवकी की ममता कराह उठी परन्तु कंस ने उसे शिला पर पटक दिया। उसके पटकते ही वह आकाश में स्थित हो गई और शस्त्र युक्त अष्ट भुजा धारण करके अट्टहास करती हुई बोली। अरे मूर्ख। मुझे मारने से तेरा क्या प्रयोजन सिद्ध होगा। तेरा वध करने वाला जन्म ले चुका है।

यह सुन कर दुष्ट कंस ने बन्दीगृह जाकर देवकी और वसुदेव को मुक्त कर दिया तथा अपने अन्य दैत्यों से नवजात बालकों पर तीखी दृष्टि रखने का आदेश दिया। राक्षसी पूतना ने कंस के आदेश पर श्री कृष्ण को अपना विषैला स्तन पान करवाया परन्तु श्री कृष्ण ने पूतना के प्राण

हर लिए। मईया यशोदा तथा बाबा नन्द भयभीत हो गए उन्होने अपने लाल को हृदय से लगा दिया।

वहां वसुदेव नन्द से मिले तथा उनसे बिनती की कि वे रोहणी के गर्भ से उत्पन्न उनके बालक को गोकुल से लाकर अपने साथ रखें और उसका पालन-पोषण भी उसी प्रकार करें जैसे श्री कृष्ण का हो रहा है। यह सुनकर बाबा नन्द गोकुल से उनका बालक लाए। दोनों का नाम संस्कार किया गया। बड़े का नाम राम तथा छोटे का नाम कृष्ण रखा गया। एक बार कृष्ण को बाबा नन्द ने छकड़े के नीचे सुला दिया। छकड़ा मिटटी के बर्तनों से भरा हुआ था। सोते-सोते बालक ने छकड़े को लात मारी छकड़ा उलट पड़ा तथा सभी बर्तन टूट गए। सभी आश्चर्य चकित थे कि इतना नन्हा सा बालक इतना बलशाली कैसे हो सकता है। कृष्ण जब थोड़े से बड़े हुए वे रेंगने लगे अब वह बहुत हुडदंड मचाने लगे थे। एक बार यशोदा कन्हैया को एक ही स्थान पर नहीं रोक पा रही थी तो उन्होने उनकी कमर में रस्सी बान्धकर ऊखल से बांध दिया और गृहकार्य में व्यस्त हो गई। तब कलमनयन श्री कृष्ण उस ऊखल को घसीटते हुए यमलानि नामक ऊंचे वृक्षों के बीच फंसा दिया और ऐसा झटका मारा कि दोनों वृक्ष गिर गए। वृक्षों के गिरने की ध्वनि सुन सभी गोपगण वहां आ पहुँचे। श्री कृष्ण को हंसते हुए देख गोपाल आश्चर्य चकित रह गए। रस्सी से बंधने के कारण ही उनका नाम दामोदर पड़ा।

इतने उत्पात देखकर बाबा नन्द व अन्य वृद्ध गोपों ने आपस में परामर्श किया। कि यह स्थान अब रहने के लिए सुरक्षित नहीं हैं अतः वे ब्रजवासी दल बांधकर छकड़ों में समान लादकर गौओं सहित वृदांवन चले गए।

इसके उपरान्त श्री कृष्ण ने यमुना के भींतर जाकर कालिया मर्दन किया। तालवन में धेनुक नामक गधे का रूप धारण किए हुए दैत्य का वध किया। श्री बलराम ने अपने अदम्य बल से छदमपूर्ण वेष धारण किए हुए दैत्य का वध किया।

श्री कृष्ण ने वृन्दावन वासियों को इन्द्र यज्ञ छोड़कर गिरियज्ञ और गौ यज्ञ करने हेतु गोवर्धन पूजा करने के लिए कहा। इस पर देवराज इन्द्र क्रोधित हो उठे। उन्होंने प्रचन्ड वर्षा करना आरम्भ कर दिया। परन्तु श्री हरि ने गोवर्धन पर्वत को अपनी तर्जनी अंगुली पर उठा कर एक विशाल छत्त बना कर सभी मानवों की गौओं की, बछडों की तथा अन्य समान की रक्षा की। वर्षा रुकने पर उन्होंने गोवर्धन को पुनः वही स्थापित कर दिया।

यह सब देखकर देवराज इन्द्र ने दोनों हाथ जोड़कर श्री हरि की बन्दना तथा स्तुति की। तब श्री हरि ने देवराज इन्द्र से कहा कि भरत वंश में कुन्ती पुत्र अर्जुन ने तुम्हारे अंश से अवतार लिया है। जब तक मैं पृथ्वी पर हूँ अर्जुन को युद्ध में कोई भी नहीं जीत सकता। मैं सदैव उसकी रक्षा करूंगा। कंस अरिष्टासुर, केशी, नरकासुर आदि दैत्यों का नाश होने के पश्चात ही महाभारत का युद्ध होगा। उसी समय यह पृथ्वी पाप के भार से मुक्त होगी। यह सुन देवराज इन्द्र उनकी स्तुति करके एरावत पर आरूढ़ हो कर स्वर्ग की ओर चले गए।

इसके उपरान्त यह सभी दृश्य देखकर स्तब्ध गोपों ने भगवान के प्रभाव का अनेक प्रकार से वर्णन किया, उनकी स्तुति तथा बन्धना की। गोपियां कृष्ण की दीवानी हो यहाँ वहाँ उनकी प्रीति में विचरन करती रही। कृष्ण ने गोपियों संग रासक्रीड़ा की तथा वे चारों पहर श्री हरि का गुणगान करने लगी।

तत्पश्चात एक संध्या जब श्री हरि रासलीला में आसक्त थे उसी समय अरिष्ट नामक एक मदोन्मत्त राक्षस वृषभ का रूप धारण करके ब्रज में उत्पात मचाने लगा। सभी गवाले गाएं तथा अन्य लोग उससे भयभीत हो रहे थे श्री हरि वृषभासुर का वध करके सभी को भयमुक्त कर दिया। सभी श्री हरि की स्तुति करने लगे।

श्री कृष्ण के प्रभाव को जानकर दुष्ट कंस ने अक्रूर को उनके पास

भेजा तथा इन्हे अपने साथ लाने के लिए आदेश दिया। कंस बलराम तथा कृष्ण को किसी भी उपाय से मारना चाहता था। अक्रूर के साथ महावली दैत्य केशी भी घोड़े के रूप में गोकुल चला गया। शीघ्र ही श्री कृष्ण ने देवों को कष्ट पहुँचाने वाले केशी का वध कर दिया। अक्रूर मन ही मन श्री कृष्ण के दर्शन पाने के लिए अति प्रसन्न तथा उत्सुक थे। उनके मन में अपार श्रद्धा भाव जागृत हो रहे थे।

अक्रूर जी के श्रद्धा भाव से ईश्वर पूर्ण परिचित थे सो उन्होंने उन्हें देखते ही आलिंगन में ले लिया। दूसरे दिन वे मथुरा की ओर चल पड़े। गोपियां श्री कृष्ण के मथुरा गमन से अति विहवल हो रही थी वे मन ही मन अक्रूर को कोस रही थी। मथुरा की ओर जाते हुए रास्ते में अक्रूर जी यमुना में स्नान के लिए रूके तथा जल के भीतर स्नान हेतु घुस गए। उन्होंने जल के भीतर सोलह कलाओं से सम्पन्न श्री कृष्ण के दर्शन कर लिए, वे प्रसन्न हो गए। मथुरा पहुँचते ही उनकी भेंट अनेक बक्रा नामक कुब्जा से हुई जो कंस के लिए उबटन पीसती थी। श्री कृष्ण के आग्रह पर उसने वह लेप राम तथा कृष्ण की देह पर लगा दिया। तब श्री कृष्ण ने उसकी ठोड़ी में अपनी दो ऊँगलिया लगा कर पैरों से उसके पैर दबाकर उचका दिए जिससे वह पूर्ण रूप से सीधी हो गई तथा सम्पूर्ण स्त्रियों में सुन्दर हो गई।

दुष्ट कंस ने जब यह समाचार सुना कि दोनों बालक मथुरा पहुँच चुके हैं उसने अपने मल्ल-चाणूर और मुष्टिक को उनका वध करने का आदेश दिया तथा महाबलवान कुवलयारीड हाथी के महावत को हाथी से उन पर आक्रमण करने को कहा। परन्तु देखते ही देखते दोनों भाईयों ने सभी का वध कर दिया। अब कंस ने अपने अनुचरों से कहा कि वे इस समाज से ग्वालों का वध कर दे, नन्द को बाँध लें तथा वसुदेव को मार डालें। कंस के आज्ञा देते ही श्री कृष्ण जी मंच पर चढ़े तथा उन्होंने बलपूर्वक कंस को उठाकर पृथ्वी पर पटक दिया और स्वयं उसके उपर कूद गए। प्रभु के उपर कूदते ही कंस ने अपने प्राण त्याग दिए। कंस

के मारे जाने के बाद उग्रसेन का राज्यभिषेक हुआ तथा श्री कृष्ण तथा बलराम विधार्जन के लिए अवन्तिपुर सान्दीपनी मुनि के आश्रम में चले गए। गुरुकुल में उन्होंने पाचचजन्य नामक दैत्य का बध किया। शिक्षा पूर्ण करके वे पुनः मथुरापुरी लौट आए।

जरासंध ने मथुरा पर चढ़ाई कर दी। श्री कृष्ण ने उसे युद्ध में हरा दिया उसके उपरान्त मुचुकुन्द द्वारा कालयवन भस्म हो गया। इसके उपरान्त श्री कृष्ण ने विदर्भ देश के कुण्डिनपुर नगर के राजा भीष्मक की पुत्री रूक्मिणी का अपहरण करके द्वारिका ले गए तथा वहां पर वेदोक्त रीति से उससे विवाह किया। श्री कृष्ण तथा रुक्मिणी के पुत्र प्रधुम्न के अतिरिक्त रुक्मिणी के गर्भ से दस पुत्र और एक पुत्री हुई। इसके उपरान्त उन्होने नरकासुर का वध किया तथा द्वारिका में सोलह हजार एक सौ कन्याओं से विवाह किया।

श्री कृष्ण ने वागासुर वध तथा पौन्ड्रक वध किया वहीं दूसरी ओर बलराम ने द्विविध-वध किया तदुपरान्त महाभारत में अर्जुन के साथ मिलकर अठारह अक्षाहिणी सेना मारकर पृथ्वी का भार उतारा। आने वाले युग को गीता का ज्ञान रूपी अमृत का दान दिया। उसके उपरान्त ब्राहमणों के शाप को सत्य करने के लिए अपने कुल का विनाश करवाया तथा अपना मानव शरीर त्याग कर बलराम, प्रधुम्न सहित विष्णुमय धाम चले गए। अर्जुन तथा भीम कन्तिहीन हो आभीरों से प्रताड़ित होने लगे। काल अपना स्वरूप बदल चुका था। कालिकाल का भूमि पर आगमन हो चुका था। कालिकाल के प्रादुर्भाव से सत्य तथा न्याय का मोल कम होने लगा तथा बल, धन, असत्य सर्वोपरि हो उठा।

प्रकाश की गति से भी तीव्र दौड़ने वाले घोड़े पर सवार युग अपनी यात्रा करते हुए कलियुग में प्रवेश कर चुके थे। लोभ, लालच असत्य निर्धनता, रोग, आदि प्रसन्नचित हो युग के स्वागत हेतु द्वार पर खड़े थे। पृथ्वी की मलिनता स्पष्ट दिखाई पड़ रही थी। धैर्य, शौर्य, पवित्रता, सत्यता मर्यादा नीतिकुशलता, प्रजावत्सल आदि गुण लुप्त होते दिखाई पड़

रहे थे। कलियुग की मलीनता ने सभी गुणों को कान्तिहीन कर दिया। दिव्य शक्तियां स्वर्गलोक की ओर चली गई थी। समस्त देवगण मूक दर्शक वन समय की लीला देख रहे थे। प्रकृति भी चिन्तित दिखाई पड़ रही थी। उसकी खुशियों पर मानों पहरा लगा दिया गया हो। उसकी दिव्य आज्ञा कान्तिहीन हो चुकी थी। गाएं अपने बछड़ों के लिए चिन्तित थी क्योंकि अब कलियुग में उनके बछड़ों के मुहँ से दूध छुड़ा दिया जाएगा। नवजात अन्य पशु तथा पक्षी प्रकृति की उदासीनता से संतप्त हो रहे थे। धरती माता लालसा भरी दृष्टि से मेघों को घूर रही थी क्योंकि अब क्या भरोसा मेघ कब धोखा देदें और समय पर न बरसें। उस स्थिति में वह अपने पर आश्रित भूवासियों को लिए खादान्न की आपूर्ति कैसे करेगी। सभी चिन्तित थे परन्तु नियति के आगे विवश थे। विधी के विधान को नतमस्तक हो स्वीकार करना ही समय की विवशता थी।

बुद्ध अवतार

परब्रहम के नौवें अवतार को गौतम बुद्ध के रूप में पूजा जाता है। महात्मा बुद्ध के जीवन की घटनाओं का विवरण अनेक ग्रन्थों में पाया जाता है। जैसे ललित बिस्तर, बुद्धचरित, महावस्तु एवं सुत्तनिपात। महात्मा बुद्ध का जन्म 563 ईपू० में कपिलवस्तु के पास लुम्बिनी वन में हुआ था। इनके पिता शुद्धोधन कपिलवस्तु के राजा थे। माता का नाम महामाया था जो देवदुह की राजकुमारी थी। इनका बचपन का नाम सिद्धार्थ था। इनके जन्म के सातवें दिन इनकी माता का देहान्त हो गया अतः इनका पालन पोषण इनकी मौसी गौतमी ने किया।

सिद्धार्थ बचपन से ही एकान्तप्रिय तथा मननशील थे। उनके पास सब कुछ था परन्तु उन्हे संतोष प्राप्त नहीं थी। इनके गम्भीर रहने की प्रवृति से चिन्तित पिता जी ने इनका विवाह 16 वर्ष की आयु में गणराज्य की राजकुमारी यशोधरा से करवा दिया। कुछ वर्ष उपरान्त इनको पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई परन्तु उनका मन पूर्णत्या अशान्त था। चार दृश्यों वृद्ध, रोगी, मृतव्यक्ति तथा संन्यासी को देखकर वे वैराग्य की राह पर आ गए।

एक रात पुत्र व अपनी पत्नी को सोता हुआ छोड़कर गृह त्यागकर ज्ञान की खोज में निकल पड़े।

अब सिद्धार्थ मगध की राजधानी राजगृह में अलार और उद्रक नामक दो ब्राह्मणों से मिले तथा ज्ञान प्राप्ति का प्रयत्न किया परन्तु वे संतुष्ट नहीं हुए। तत्पश्चात वे निरंजना नदी के किनारे उखले नामक वन में पहुंचे जहां उनकी भेंट पांच ब्राह्मण तपस्वियों से हुई। वहां उन्होने कठोर तप किए परन्तु कोई लाभ न हुआ।

वहां सब कुछ छोड़कर गया (बिहार) पहुंचे, वहां पर एक वटवृक्ष के नीचे समाधी लगाई और प्रतिज्ञा की कि वे यहां से ज्ञान प्राप्त किए बिना कहीं नहीं जाएगें। सात दिन व सात रात समाधिस्थ रहने के उपरान्त आठवें दिन बैशाख पूर्णिमा के दिन महात्मा बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ। उनकी ज्ञान प्राप्ति को सम्बोधि कहा गया। जिस वट वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था उसे "बोधि वृक्ष" तथा गया को बोध "गया" कहा जाता है।

ज्ञानप्राप्ति से महात्मा बुद्ध संतुष्ट हो गए उन्हें अत्यधिक आनन्द की प्राप्ति हो गई तत्पश्चात सर्वप्रथम बनारस के निकट सारनाथ में उन्होने अपने पूर्व के पांच संन्यासी साथियों को उपदेश दिए। इन शिष्यों को पंचवर्गीय कहा गया। महात्मा बुद्ध उनकी पत्नी, पुत्र व अनेक उनके सगे सम्बन्धि तथा अन्य उनके उपदेश सुन कर उनके शिष्य बन गए। बौद्ध धर्म के उपदेशों का संकलन ब्राह्मण शिष्यों ने त्रिपिटकों के अन्तर्गत किया।

त्रिपिटक संख्या में तीन हैं।

1. विनय पिटक

2. सुत पिटक

3. अभिधम्म पिटक

इन ग्रन्थों की रचना पाली भाषा में की गई हैं। हिन्दू धर्म में जो स्थान वेद-पुराणों का है बौद्ध धर्म में वही स्थान पिटकों का है।

सम्राट अशोक बौद्ध के उपदेशों के सबसे बड़े प्रचारक थे। कांलिग युद्ध में जो रक्तपात हुआ था उससे वह अत्यन्त व्यथित थे। नरसंहार से उनका हृदय संतप्त हो चुका था अतः उन्होंने बुद्ध के उपदेशों को आत्मसात करते हुए इन उपदेशों को अभिलेखों द्वारा जन-जन तक पहुँचाया। डॉ भीमराव आंम्बेडकर भी बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। महात्मा बुद्ध आजीवन नगर-नगर घूम कर अपने समाज से अज्ञानता के तिमिर को समाप्त करने का प्रयास करते रहे। जब वे कुशीनगर गए वहां जाते ही वे अस्वस्थ हो गए तथा 438 ई० में बैशाख पूर्णिमा के दिन उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया तथा व ब्रहमाण्ड में लीन हो गए। उनके शरीर त्यागने की घटना को महापरिनिर्वाण कहा जाता है। उनके उपदेश प्राणी हिंसा के सख्त विरोधी थे।

कल्कि पुराण

अत्यन्त आश्चर्य का विषय है कि जो अभी कई वर्षों उपरान्त घटित होने जा रहा है वह युगों पूर्व पुराणों में लिखा जा चुका है। वह महाऋर्षि कितने विद्वान होंगे जिन्होने भविष्य की ऐसी सटीक जानकारियां दी होंगी। आज तक पुराणों में जो भी लिखित पाया गया है। वह सभी घटनाएं सत्य की कसौटी पर शत-प्रतिशत सटीक रही। इसका अर्थ यह हुआ कि इसी कलिकाल में महाविष्णु के दसवें अवतार होंगे और वही इस धरती से अधर्म का नाश करेंगे। शायद कल्कि के नाम से ही इस युग का नाम कलियुग रखा गया हो। कालियुग यानि कल्कि का युग।

कल्किपुराण में कहा गया है कि कालियुग में श्री विष्णु का महाअवतार कल्कि अवतार होगा। इस पुराण के अनुसार 4320 वीं शती में कलियुग अपने अन्तिम चरण में होगा और उसी समय कल्कि अवतार लेंगें।

इस पुराण में ऋषि मार्कण्डेय जी और शुकदेव जी के संवादों द्वारा कल्कि कथा कही गई है। पुराणों के अनुसार जब अन्याय, अधर्म, रक्तपात हिंसा, लूटपाट आदि से धरती संतप्त हो उठेगी धर्म, का सर्वत्र नाश हो रहा होगा तब परब्रहम अपने दसवें तथा अन्तिम अवतार में प्रकट होंगे तथा दुष्टों का संहार करके धर्म की पुनः स्थापना करेंगे।

भगवान कल्कि युगप्रवर्तन करेंगे, उनका प्रयोजन विश्वकल्याण होगा। श्रीमद्भागवत महापुराण में श्री विष्णु के सभी अवतारों का वर्णन किया गया है। इसके बारहवें स्कन्ध के द्वितीय अध्याय में भगवान कल्कि की संपूर्ण कथा का विवरण दिया गया है। कथा के अनुसार सम्भल ग्राम में विष्णुयश नायक श्रेष्ठ ब्राह्मण के पुत्र के रूप में भगवान कल्कि जन्म लेंगें। उनकी माता का नाम सुमति होगा। उनसे बड़े उनके तीन बड़े भाई होंगे। उनकी दो पत्नियां होंगी-

लक्ष्मी रूपी पदमा तथा वैष्णवी रूपी रमां उनकी चार संताने होंगी। जिनके नाम क्रमशः जय, विजय, मेघमाल तथा बलाहक होंगे।

भगवान का स्वरूप परम दिव्य एवं ज्योतिमय होगा। गौरवर्ण भगवान कल्कि के विशाल नेत्र, ललाट पर गोरवशाली तिलक, पीले वस्त्र धारण किए हुए, चौड़ा सीना, विशाल भुजाएं तथा हृदय पर श्रीवत्स का शुभ चिन्ह अंकित कण्ठ में कौस्तुभ मणि की माला होगी। भगवान श्वेत घोड़े पर सवार होंगे तथा उनके करकमलों में मुख्यता खड्ग, धनुष तथा कमौदिकी नामक गदा है। इसके अतिरिक्त उनके पास पांचजन्य नामक शंख हैं। भगवान के शरीर से उठती हुई दिव्य सुगंध से समस्त वातावरण पावन हो उठेगा।

जन्म स्थान - कल्कि अवतार के सम्भल गांव में होने पर सभी विद्वान इसी दुविधा में हैं कि यह कौन सा सम्भल गांव होगा क्योंकि भारत वर्ष में एक नहीं कई सम्भल गांव हैं जो भिन्न-भिन्न राज्यों में पाए जाते हैं। कुछ विद्वान उनके अवतार को मुरादाबाद उत्तर प्रदेश में

स्थित सम्भल गांव में होना मानते है तो वहीं दूसरी और कुछ विद्वान उड़ीसा, पंजाब आदि में मानते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि यह अवतार जम्मू-कश्मीर के जिला उधमपुर में स्थित सम्भल गांव में होगा।

कल्कि अवतार का विवाह बृहद्रथ की पुत्री पदमादेवी से साथ होना कहा गया है परन्तु कटरा जम्मू में वैष्णों देवी की कथा सम्बन्ध में बिकने वाली पुस्तिका तथा अन्य स्रोतों में इस कथा का वर्णन है कि मां वैष्णवी श्री राम से विवाह करना चाहती थी परन्तु श्री राम अपनी पत्नी सीता के अतिरिक्त किसी अन्य से विवाह नहीं करना चाहते थे वे वचनबद्ध थे एक पत्नी के प्रति निष्ठावान रहने के लिए अत: उन्होंने वैष्णवी मां से कहा कि वे कलियुग में कल्कि रूप में प्रकट होंगे तब उनसे विवाह करेंगे।

श्री रामचरितमानस के विष्किन्धा काण्ड में एक देवी का वर्णन है इन्होंने हनुमान तथा अन्य वानरों को सागर तट तक पहुँचाया था। उस समय यह देवी एक गुफा में तपस्यारत थी यही देवी माता वैष्णों के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उन्हें कल्कि अवतार एक साकार रूप प्रदान करेंगे तथा उनसे विवाह करेंगे।

कल्कि अवतार अपनी शिक्षा-दीक्षा भगवान श्री परशुराम जी से ग्रहण करेंगे। वही उन्हें शिव तपस्या की राह बताएगें तथा अस्त्र-शस्त्र विधा देंगें। भगवान परशुराम इनके गुरु होंगे तथा इन्हीं के मार्गदर्शन से भगवान कल्कि अपने बौद्धिकबल से तथा दिव्य शक्तियों से इस धरती पर पुन: धर्म की स्थापना करेंगे।

कल्कि मन्दिर

सम्भल मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश में स्थित कल्कि मंदिर में प्रत्येक वर्ष अक्टूबर नवम्बर माह में कल्कि महोत्सव मनाया जाता है।

गुलाबी नगरी जयपुर, राजस्थान मथुरा के गोवर्धन स्थित श्री गिरिराज मन्दिर परिसर में कल्कि मंदिर है। वाराणसी (उ० प्र०), अजमेरी गेट

दिल्ली, मादोपुर पंजाबी बाग, सीतापुर, (उ०प्र०) कोलकाता, गया-विहार गुडगाँव-हरियाणा आदि में भगवान श्री कल्कि के मंदिर हैं। इनके अतिरिक्त भारत के हर कोणे में कल्कि अवतार के कई मंदिर स्थित हैं। नेपाल में भी एक मंदिर में कल्कि भगवान की मूर्ति स्थापित हो चुकी है।

कल्कि भगवान के नाम पर नेपाल में विश्व का प्रथम सरकारी बैंक "श्री कल्कि बैंक खुल चुका है संत मावजां रचित ग्रंथो एवं वाणी में कल्कि अवतार का अति सुंदर व्याख्यान प्राप्त होता है। संत जी के अनुयायी पिछले पौने तीन सौ वर्षों से इस भावी अवतार की विधिवत पूजा अर्चना कर रहे हैं।

\

तृतीय अध्याय

भगवान श्री परशुराम कथा

सभी गुणों से युक्त संसार से सभी प्रकार के पापों का नाश करने में सक्षम भगवान श्री परशुराम जी परमवीर, शौर्यवान, ज्ञान के पुंज है। इनके नाम सुमिरण मात्र से मनुष्य के सभी पापों का नाश हो जाता है अज्ञानता रूपी असुर इनसे दूर भागते हैं। इनके सिमरण से मानसिक संतोष तथा जगत में अपने होने का प्रयोजन तथा लक्ष्य का मार्ग प्रशस्त होता है। इनमें ब्रह्म के रजोगुण का अंश है इसी गुण के आधार पर इन्होंने समय-समय पर अनेक योद्धा तैयार किए। इन्होने भीष्म, द्रोणाचार्य एवं कर्ण जैसे शूरवीरों को ऐसी शिक्षा तथा ऐसा ज्ञान दिया कि वे युग के महान योद्धा कहलाए। कलियुग में प्रकट होने वाले परब्रह्म के दसवें अवतार श्री कल्कि अवतार को भी भगवान श्री परशुराम जी ऐसी शस्त्र-शास्त्र शिक्षा देंगे तथा उन्हें एक अपूर्व अजेय योद्धा बनाएंगे जो समस्त पापों का नाश करेगा।

शिवजी के तमोगुणी अंश से उन्होने पाप पापियों का समूल नाश किया। सहस्त्रबाहु जैसे कपटी, पापी राक्षस पर वे कहर बनकर ऐसे टूटे कि उसकी तमाम शक्तियां प्रभु के आगे धराशाई हो गई। उन्होंने तत्कालीन समाज में फैली हुई कुरीतियों तथा पापों का नाश करके एक स्वस्थ समाज की नींव रखी। उन्होंने अधर्म का नाश करके धर्म तथा सत्य की स्थापना की।

श्री विष्णु के सतोगुणी अंश से उन्होने धर्म की परवरिश की उसे सुदृढ़ता प्रदान की। उन्होने ब्राह्मणो की, भूमि की, नारियों की, गौ की

तथा सत्य की रक्षा की। उन्होने समस्त प्राणियों की इस प्रकार रक्षा की जैसे एक पिता अपने परिवार की रक्षा करता है।

अवतार का प्रारूप

अवतार शब्द का अर्थ है ऊपर से नीचे उतरना। अवतार लेने से अभिप्राय है ईश्वर का प्रकट रूप में हमारी आखों के सामने कोई शरीर धारण करके लीला करना।

धर्मग्रन्थों में अवतारों के पाँच भेद बताए गए हैं जो इस प्रकार है:- पूर्णावतार, अंशावतार, कलावतार, आवेशवतार और अधिकारी अवतार।

सृष्टि का निर्माण करने वाले नारायण आवेशावतार लेकर भगवान परशुराम के रूप में प्रकट हुए। आवेश का अर्थ है क्रोध। जिस समय इनका अवतार हुआ उस समय पृथ्वी कष्टों में डूबी हुई थी अतः इनके जन्म से पूर्व पृथ्वी भगवान विष्णु के पास गई और अनुरोध किया हे भगवन! आप पृथ्वी के पालनहार हैं दुष्ट राजाओं द्वारा मचाए गए उत्पात और सामान्य जन की पीड़ा से आप परिचित होगे ही। भगवन ने कहा उन्हें सब ज्ञात है इस पर पृथ्वी कहने लगी "हे भगवन! अब यह पीड़ा मैं नहीं सह सकती। चारों ओर रक्तपात हो रहा है। निरपराध लोगों की हत्या हो रही है, अब आप ही कुछ मार्ग दिखाईए प्रभु!" "मेरे अवतार लेने का समय आ गया है चिन्ता मत करो।" "मैं शीघ्र भी भूलोक मे अवतार लेकर आ रहा हूँ। भगवान का उत्तर सुनकर पृथ्वी प्रणाम करती हुई कहने लगी, "मैं उस दिन की प्रतीक्षा करूंगी।" इस प्रकार स्वयं विष्णु भगवान श्री परशुराम जी के रूप में आवेशावतार लेकर पृथ्वी पर प्रकट हुए। जिस समय इनका अवतार हुआ उस समय भूमि पर कई राजा ऐसे थे जिनके पास कई सैनिक थे तथा जिनका बाहुबल अत्यन्त प्रबल था परन्तु उनका विवेक पथभ्रष्ट हो चुका था। बाहुबली यदि विवेकी हो तो वह जग का कल्याण करता है परन्तु यदि वह अविवेकी हो और सद्मार्ग से भटक चुका हो तो वह समस्त समाज के लिए हानिकारक

रहता है। ऐसे में धर्म की रक्षा का प्रश्न उठ खड़ा हो जाता है। जगत के पालनहार ने स्वयं धर्म की रक्षा हेतु आवेशावतार चुना तथा अधर्मियों का नाश किया। क्योंकि सत्य, ज्ञान, विवेक, शौर्य पराक्रम, भक्ति और कर्म के साथ-साथ यदि आवेश हो तो अन्याय हो ही नहीं सकता है।

भृगुकुल वर्णन

कुशाम्ब ने इन्द्र के समान पुत्र प्राप्ति की इच्छा को पूर्ण करने हेतु तप किया। उनकी कठोर तपस्या देखकर इंद्र भयभीत हो उठे। उनके मन में यह शंका उत्पन्न हो गई कि बल में मेरे समान कहीं कोई और न पैदा हो जाए। इसी के चलते इन्द्र ने स्वयं उनके घर में पुत्र रूप में जन्म लिया। इस पुत्र का नाम गाधि रखा गया। बाद में वह गाधि नामक पुत्र ही कौशिक कहलाया। गाधि अत्यन्त सुन्दर, पराक्रमी तथा बलिष्ठ बालक था। बड़े होकर उसका विवाह एक सुन्दर तथा गुणी कन्या के साथ संपन्न हुआ। गाधि के घर में सत्यवती नामक कन्या उत्पन्न हुई। सत्यवती का विवाह भृगुपुत्र ऋचीक के साथ सम्पन्न हुआ। ऋचीक एक हठी ब्राह्मण थे तथा वे स्वयं सत्यवती को पत्नी रूप में पाना चाहते थे। ऋचीक ने गाधि से उनकी कन्या का हाथ उनके हाथ में देने का अनुरोध किया गाधि नही चाहते थे कि उनकी कन्या का विवाह ऋचीक से हो परन्तु वे स्पष्ट रुप से मना भी नहीं कर पाए। इस प्रकार उन्होने कन्या के एवज में एक हजार श्यामवर्ण घोड़ों की मांग की जो पवन के वेग से तेज दौड़ते हों गाधि को आशंका थी कि वे ऐसा नही कर पाएंगे परन्तु महर्षि ऋचीक ने वरुण देवता से एक हजार श्यामवर्ण घोड़े लाकर उन्हे दे दिए। तदुपरान्त उनका विवाह सत्यवती से सम्पन्न हो गया। विवाह के पश्चात वहां महार्षि ने आकर अपनी पुत्रवधू को आर्शीवाद दिया और उससे वर मांगने के लिए कहा। इस पर सत्यवती ने अपने श्वसुर को प्रसन्न देखकर उनसे अपनी माता के लिए एक पुत्र की याचना की। सत्यवती की याचना पर भृगु ऋषि ने उसे दो चरू दिए पवित्र हवन कुण्ड में पकाई गई खीर को चरू कहते हैं। चरू पात्र देते हुए उन्होने कहा कि जब तुम और

तुम्हारी माता ऋतु स्नान कर चुकी हो तब तुम और तुम्हारी मां पुत्र की इच्छा लेकर पीपल का आलिंगन करना और तुम उसी कामना को लेकर गूलर का आलिंगन करना। फिर मेरे द्वारा दिये गए चरूओं का सावधानी के साथ अलग-अलग सेवन करना। इधर सत्यवती की माता सत्यवती से कहने लगी हे पुत्री। सभी अपने लिए गुणवान पुत्र की कामना करते हैं। अपनी पत्नी के भाई के गुणो में किसी को विशेष रूचि नहीं होती इसलिए ऋचीक को भी अपनी संतान में ही विशेष रूचि होगी और उनके पिता भृगु महर्षि को भी अपने पौत्र में रूचि होगी। अतः मैं यह तुम्हारा विशेष चरू ग्रहण करती हूं और तुम मेरा यह साधारण चरू ग्रहण कर लो। क्योंकि मेरे पुत्र को राजा बनना है तथा समस्त भूमण्डल का रक्षण तथा पालन करना है। ब्राह्मण पुत्र को बल, सम्पति से क्या सरोकार। माता के वचन सुनकर सत्यवती ने अपना चरू माता को दे दिया तथा उनका चरू स्वयं ग्रहण कर लिया। योगशक्ति द्वारा भृगु को इस बात का ज्ञान हो गया और वे अपनी पुत्रवधू के पास आकर बोले कि पुत्री! तुम्हारी माता ने तुम्हारे साथ छल करके तुम्हारे चरू का सेवन कर लिया है। इसलिए अब तुम्हारी संतान ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रिय जैसा आचरण करेगी और तुम्हारी माता की संतान क्षत्रिय होते हुए भी ब्राह्मण जैसा आचरण करेगी। इस पर सत्यवती ने भृगु से विनती की कि आप आशीर्वाद दें कि मेरा पुत्र ब्राह्मण का ही आचरण करे भले ही मेरा प्रौत्र क्षत्रिय जैसा आचरण करे। भृगु ने प्रसन्न होकर उसकी विनती स्वीकार कर ली। समय आने पर सत्यवती के गर्भ से जमदग्नि का जन्म हुआ। जमदग्नि अत्यन्त तेजस्वी थे। बड़े होकर उनका इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न प्रसेनजित की कन्या रेणुका से विवाह हुआ। रेणुका से उनके पाँच पुत्र जिनके नाम थे-रूक्मवान, सुखेण, वसु, विश्वानस और परशुराम हुए।

भगवान परशुराम की उत्पति तथा समय

महऋषि जमदग्नि अत्यन्त तपस्वी तथा धर्म में आस्था रखने वाले ईश्वर के अनुयायी थे। उनकी धर्मपत्नी रेणुका सौन्दर्य, शील, ममता तथा

धर्म की स्वामिनी थी उनके चार आज्ञाकारी पुत्र थे जिनके नाम क्रमश रूक्मवाण, सुखेण, वसु, विश्वानस थे। यह त्रेतायुग के वैदिक काल समय था। अन्याय तथा अधर्म अपने चर्म पर था उस काल में राजा तथा राजदरबार विवेक शून्य हो बाहुबल के आधार पर मनमानी कर रहे थे। ऋषि मुनियों का तिरस्कार किया जा रहा था साधारण मनुष्य के लिए जीवन यापन करना कठिन हो चुका था। धरती पाप के बोझ से दबकर संतप्त हो रही थी। हृदय से करूणा का अभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा था। राजा धन, बल तथा ऐश्वर्य के कारण धर्म पथ से भटक चुके थे।

विपरीत स्थितियों का आभास होने से महाऋषि जमदग्नि संतप्त हो उठे। वे ईश्वर की उपासना हेतु पत्नी सहित ''तापे का टीवा'' नामक स्थान पर चले गए। यह स्थान एक सुंदरझील के किनारे स्थित है। महऋषि ने यहां एक कुटिया बनवाई तथा कई वर्ष यहां रहकर घोर तपस्या में लीन हो गए। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर एक दिन आकाश में दिव्य प्रकाश उत्पन्न हुआ तथा जगत का निर्माण करने वाले श्री विष्णु भगवान ने आकाशवाणी कर कहा कि हे ऋषिवर मैं तुम्हारी तपस्या से अति प्रसन्न हूं। अब शीघ्र ही मैं स्वयं तुम्हारी पत्नी के गर्भ से तुम्हारे पुत्र के रूप में अवतार लूंगा तथा अधर्मियों का नाश करके पृथ्वी पर पुनः धर्म की स्थापना करूंगा। ऐसे वचन बोलकर भगवान अर्न्तध्यान हो गए।

कुछ समय पश्चात ऋषि जमदग्नि की पत्नी रेणुका गर्भवती हुई। उनके गर्भवती होते ही उनका मुखमण्डल दिव्य प्रकाश से देदिप्यमान हो उठा। प्रकृति का कण-कण प्रफुल्लित हो चहचहाने लगा। उनके आवास के इर्द गिर्द खुशियों के फूल मानों खिलने को उताबले हो उठे। सदकर्मों में लीन समय अपनी गति से चलता रहा और नियत समय पर बैशाख मास के शुक्ल पक्ष की अक्षय तृतीया को भगवान का जन्म हुआ। उनके जन्म लेते ही नभ गर्व से गौरवाम्वित हो उठा। पशु-पक्षी नवीन परिवर्तन के आभास से हर्षित हो उठे। सुकृतियों के अच्छे भाग्य का निर्माण करने

में नियति जुट गई। ब्रह्मा, विष्णु, महेश आकाश मण्डल से इस मनोरम दृश्य का अवलोकन करके धन्य हो उठे। देवांगनाए मधुर गान के साथ नृत्य करने लगीं। पृथ्वी पर आकाश से मानों पुष्प वर्षा होने लगी। महऋषि नारद नारायण-नारायण का जाप करते हुए प्रसन्न मुद्रा में झूम उठे। नदियों का वेग तीव्र हो गया मानो वे सबसे पहले श्री विष्णु के अवतार का अवलोकन करना चाहती हों। सागर बाहें पसारे मस्ती में और अधिक फैल गया। परिवर्तन की सुगन्ध चारों और फैलने लगी। ठुमक-ठुमक कर चलने वाला सूर्य ठिठक कर तनिक रुका और आश्चर्य तथा प्रसन्नता मिलेजुले भाव समेटे आगे बढ़ गया। बाहें पसारे खड़े विशाल वृक्षों से लताएं झूम कर लिपट गई और हर्षो उल्लास से पवन बतियाने लगी। जर्जर-जर्जर हो रहा धर्म नवऊर्जा से ओत-प्रोत होने लगा। उसकी शिथिल पड़ चुकी भुजाएं सशक्त होने जा रही थी।

दिव्य तथा सुन्दर बालक को पाकर सभी प्रसन्न हो उठे। पितामह महऋषि भृगु द्वारा उनका नामकरण किया गया। नामकरण संस्कार के अनन्तर उनका नाम राम तथा रामभद्र रखा गया। वे बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि थे तथा माता-पिता के आज्ञाकारी पुत्र थे।

उनकी वीरता तथा पराक्रम से समस्त भूमिवासी अवगत थे। वे श्री विष्णुभगवान के आवेशावतार थे। उनमें अनेक दिव्य शक्तियों का समावेश था उन्होने समस्त जीवन धर्म की रक्षा तथा स्थापना में बिताया। उन्होंने अपना जीवन समाज के कल्याण हेतू समर्पित करते हुए यायावर की भांति प्रवास में बिताया।

भगवान परशुराम का स्वरूप

भगवान श्री परशुराम जी का स्वरूप इस प्रकार है :- ऊंची कद - काठी नेत्र विशाल और तेज से भरपूर जिन्हे साधारण दृष्टि से देखना असम्भव, ऊँचा आभाशील मस्तक, धनी काली भौहें, लम्बी काली जटाएँ मानो स्वयं भोले शंकर धरती पर आए हों। जटाओं से बंधा हुआं जूढ़ा,

कर्ण कुण्डल धारण किए हुए कान्ति से भरपूर गोरवर्ण, शौर्यवान बाहें जो सदैव धर्मयुद्ध में पराक्रम दिखाने को उत्सुक हो। दाएं हाथ में शिवप्रदत्त परसा बांए हाथ में धनुष पीठ पर शक्ति शाली वाणों से भरा तुणीर, विशाल सीना कण्ठ में रुद्राक्ष की माला कटि से बंधी पेड़ की छाल से बना वस्त्र, लौह पुरुष का आभास कराती सुदृढ़ जँघाए, चरणों में खंढ़ाऊ धारण की हैं। विशाल सीने पे जनेऊ धारण किए हुए ब्राह्मण स्वरूपी श्री परशुराम मानो न्याय और धर्म की प्रतिमूर्ति अनुभव होते हैं।

ऐसे स्वरूप से धर्म और न्याय के विरुद्ध चलने वाली पिशाची प्रवृत्ति वाली शक्तियां सिहर उठती है। भगवान परशुराम जी की उपासना से बाह्म ही नहीं अंतस भी आलौकिक हो उठता है। धन-धान्य की कोई कमी नहीं रहती तश्ग समाज में यश शोहरत बनी रहती है। वे समस्त इच्छाओं की पूर्ति करते है। नियमित शुद्ध हृदय से उनकी उपासना करने वाले को कभी किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं होता तथा प्रभु मुक्ति मार्ग को प्रशस्त करते हैं।

प्रभु परशुराम जी के स्वरूप का चिंतन मात्र मन को शान्ति प्रदान करता है। हृदय में नवऊर्जा का आशावादी संचार होने लगता है। मानव अपने जीवन के संघर्षों की थकान से निश्चिन्त होकर संतोष को प्राप्त करता है तथा जीवन सरल सा प्रतीत होने लगता है। एक अदभुत सी प्रसन्नता का अनुभव होने लगता है।

सनातन धर्म परम पुजनीय ग्रन्थ श्री वालमिकी रामायण में श्री परशुराम जी का चित्रण इस प्रकार किया गया हैः-

ददर्श भीमसडकांश जटावल्कलधारिणम्।
भार्गव जमद्ग्नेयं राजा राजविमर्दनम।।
कैलासमिव दुर्धर्ष कालग्निमिव दः सहम्।
ज्वलन्तमितमिव तेजाभिर्दुर्निरीक्ष्यं पृथ्वीजनै।
स्कन्धे चासच्य परशुं धनुर्विद युदगणोपमम्।

प्रगृहय शरमुग्रं चत्रिपुरहनं यथा शिवं।
वालमिकी रामायण
बालकाड़ (74, 17-19)

अर्थात :-

जिस समय भगवान परशुराम के दर्शन श्री रामचन्द्र के पिता राजा दशरथ जी ने किए उस समय उनके स्वरूप का वर्णन इस दृश्य में किया गया है।

वे एक भ्रार्गव ब्राह्मण हैं जो बहुत विशाल हैं। जिन्होने जटा धारण की है। कमर में वलकल अर्थात पेढ़ की छाल से बनाया गया विशेष वस्त्र है। इतने बलशाली तथा पराक्रमी और वीर योद्धा जिन्होने नड़े-बड़े अधर्मी राजाओं को समाप्त किया। उन्हें प्राप्त करना उतना ही दुर्गम है जितना कि कैलाश पर्वत पर पहुंचना। उनके तेज को सहना उसी प्रकार है जैसे कालग्नि (अग्नि) के ताप को सहना। उनमें इतना तेज, इतना शौर्य और इतने गुण हैं कि उनकी ओर देखना भर असम्भव है। एक साधारण मनुष्य के लिए उनके अवलोकन के लिए दिव्य दृष्टि चाहिए। उन्होने दाएं कन्धे पर परशु धारण किया है तथा बाएं कन्धे पर अनुपम धनुष विराजमान है। उनके हाथ में एक नुकीले मुँह वाला तीर है। इस प्रकार उनका दिव्य स्वरूप त्रिपुरानाथ शिव जैसा प्रतीत होता है।

भगवान परशुराम के माता-पिता का वर्णन

परशुराम जी की माता सूर्यवंशी राजा इक्ष्वाकु की पोती रेणुका थीं। भृगुपुत्र ऋचीक के सपुत्र जमदग्नि परशुराम जी के पिता थे महर्षि ऋचीक पर वरुण देवता की विशेष कृपा थी। इस प्रकार इनके पिता जमदग्नि में दिव्य शक्तियों का समावेश था अग्नि सम्बन्धी शक्तियों पर इनका पूर्ण अधिकार था। इनकी माता रेणुका में जल संसाधन सम्बन्धि शक्तियों का समावेश था। संपूर्ण जल स्रोतों पर इनका अधिकार था तथा वे इन स्रोतों की रक्षा करती थी। उनमें इतनी शक्ति थी कि वे गीली मिट्टी के कच्चे

घड़े से जल भरकर उठा सकती थी। जलीय शक्तियों के समावेश के कारण ही जब मां रेणुका अपने पति की मृत्यु पर विलाप करती हुई झील में जलमसमाधि ले कर उसी में समा गई तभी से वह झील नारी आकृति में परिवर्तित हो गई। तब से यह झील रेणुका झील के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

यह रेणुका झील हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले में स्थित है। यह अत्यन्त पवित्र तीर्थ स्थान के रूप में प्रसिद्ध है यहां पर हर वर्ष प्रबोधिनी एकादशी के दिन मेला लगता है दूर-दूर से भक्त यहां पर आते है। पुराणों के अनुसार इस दिन भगवान परशुराम अपनी मां से मिलने इसी झील पर आते हैं। मां रेणुका ने अपने पुत्र श्रीपरशुराम को वचन दिया था कि हर वर्ष प्रबोधिनी एकादशी को वह इसी स्थान पर अपने पुत्र से मिलने आया करेंगी।

मान्यता के अनुसार आज भी प्रवोधिनी एकादसी के दिन मां रेणुका अपने पुत्र श्री परशुराम जी से मिलने रेणुका झील पर आती हैं। इस दिन को सभी श्रदालु माताएं अपने पुत्र की दीर्घ आयु की कामना से व्रत-उपवास रखती हैं। माना जाता है कि जिस प्रकार माता रेणुका झील पर आकर अपने पुत्र से मिलकर उन्हें आशीर्वाद देती हैं उसी प्रकार यदि सभी माताएं उस दिन उपवास करके अपने पुत्र को आशीर्वाद दें तो वह अत्यन्त फलदायी रहता है। उनके जीवन की सभी बाधाएं तथा कष्ट दूर हो जाते हैं।

भगवान परशुराम जी की शिक्षा-दीक्षा

भगवान परशुराम श्री नारायण के छठे अवतार हैं। वे अपने माता-पिता के पांचवे तथा सबसे छोटे पुत्र थे। वे बचपन से ही माता-पिता के आज्ञाकारी थे वे अत्यन्त बलशाली तथा कुशाग्र बुद्धि थे। ईश्वर का अवतार होने से उनमें कुछ दिव्य शक्तियाँ जन्म से ही थी। समय के अनुसार यह दिव्य शक्तियां और अधिक प्रभावशाली होती गई। उनकी आरम्भिक शिक्षा महाऋर्षि विश्वामित्र एवं महऋषि ऋचीक के आश्रम में सम्पन्न हुई।

महऋषि ऋचीक ने उनकी कुशलता तथा बैद्धिक क्षमता पर प्रसन्न होकर उन्हे 'सांरग' नामक दिव्य वैष्णव धनुष प्रदान किया। उनकी योग्यता की प्रसिद्धि चारों और फैल रही थी इसी योग्यता से प्रसन्न हो महऋषि कश्यय ने उन्हे विधिवत अविनाशी वैष्णव मन्त्र दिया। सभी महऋषि अपनी दिव्य दृष्टि से उन्हे पहचान चुके थे कि वे प्रभु के ही अंश हैं। इसलिए वे सभी दिव्यास्त्रों तथा दिव्य मन्त्रों से उनका श्रृगांर कर रहे थे।

जब प्रभु परशुराम जी किशोरावस्था में प्रवेश हुए तो वे कैलाश, गिरिश्रंग पर स्थित भगवान शंकर के आश्रम में विद्या प्राप्त करने के लिए पहुंच गए। भगवान शंकर जब क्रोधित होते है तो वे तांडव करते है। तांडव में उनके भाव, उनके क्रिया कलाप अति आकर्मक हो उठते है। इससे समस्त देह में क्रोध की अनोखी ज्वाला का संचार होता है जिससे सामने आया हुआ शत्रु चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो पल में नष्ट हो जाता है। कलरी विद्या इसी तांडव का ही प्रारूप है। और श्री परशुराम जी भगवान शंकर से यह विद्या पाकर अत्यन्त शक्तिशाली हो गए। इसके अतिरिक्त शिवजी ने उन्हे दिव्यास्त्र विदयुदभि नामक परशु प्रदान किया। शिव प्रदत परशु पाकर ही वे परशुराम कहलाए। शिवजी ने उन्हे त्रिद्या के साथ-साथ शास्त्र विद्या का भी ज्ञान दिया। उन्होने उन्हे श्री कृष्ण का त्रैलोक्य विजय कवच, स्ववराज स्तोत्र एवं मंत्र कल्पतरु प्रदान किए। यह सब पाकर वे ऐसे योद्धा बन गए जो किसी से भी पराजित नहीं हो सकते थे। इसके उपरान्त उन्होने चक्रतीर्थ में कठिन तप किया। तप से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने उन्हे त्रेतायुग में रामावतार होने पर तेजोहरग के उपरान्त कल्पान्त पर्यन्त तपस्यारत भूलोक पर रह्ने का वर दिया।

मां गायत्री की उन पर विशेष कृपा थी। ज्ञान का स्रोत होने के कारण मां गायत्री को वेदमाता भी कहा जाता है। मां गायत्री को कामधेनु तथा कल्पवृक्ष भी कहा गया। इस प्रकार मां गायत्री की कृपा तथा कठिन पंरिश्रम से भगवान परशुराम चारों वेदों के ज्ञाता होने के कारण शस्त्र-शास्त्र में निपुण हो गए। उन्होने जो युद्ध कला शिवजी से सीखी थी उसमें

वे इतने पारंगत हुए कि उनका नाम ब्रह्मक्षत्रिय पड़ गया। एक बार भगवान शिव ने अपने शिष्य की युद्ध कला की परीक्षा लेने हेतु अपने साथ युद्ध करने का निमंत्रण दिया। परशुराम जी ने युद्ध करते-करते अपने ही गुरुदेव शिवजी को घाव दे दिया। भगवान शंकर उनके उत्तम प्रदर्शन से प्रसन्न हो गए। शिवजी से शस्त्र विद्या तथा दिव्य परसा पाकर अब धरती पर कोई ऐसा नहीं था जो भगवान परशुराम को हरा सकता।

वे शस्त्रविद्या के महान गुरु थे। उन्होने भीष्म द्रोण व कर्ण को शस्त्रविदया प्रदान की थी। जो कि द्वापर युग के महान योद्धा कहलाए थे।

शास्त्र विद्या

शस्त्रविदया के साथ-साथ उन्हें शास्त्रविद्या का भी संपूर्ण ज्ञान था वे चारों वेदों के ज्ञाता थे उन्होंने एकादश छन्दयुक्त शिव ''पंचत्वारिशनाम स्तोत्र'' भी लिखा। यह मन्त्र इच्छित फल-प्रदाता मन्त्र है। इसका जाप करने से मनचाही इच्छा पूर्ण हाती है तथा मोक्ष प्राप्त होता है।

''ॐ जामदग्न्याय विद्महे महावीराय धीमहि तन्नोपरशुरामः प्रचोदयात''। उपरोक्त मन्त्र का जाप करने से इच्छित फल पाया जा सकता है। वे धरती पर वैदिक संस्कृति का प्रचार करना चाहते थे।

आधुनिकता का समावेश

वैदिक काल में उत्पन्न होने पर वे पुरुषों के लिए आजीवन एक पत्नीव्रत के पक्षधर थे। उस काल में भी उनकी विचारधारा कितनी आधुनिक थी कि स्त्रियों की उन्नति और प्रगति के लिए वे सदैव प्रयासरत रहे। उन्होंने अत्रि की पत्नी अनसूया, अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा, व अपने प्रिय शिष्य अकृतवेण के सहयोग से विराट नारी-जागृति-अभियान का संचालन किया जिसके अन्तगत उन्होंने नारी शिक्षा को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

कहा जाता है कि भारत के अधिक़ांश ग्राम उन्हीं के द्वारा बसाये

गए है। उनका भाव इस जीव सृष्टि को उसके प्राकृतिक सौंदर्य सहित जीवन्त बनाए रखना था। वे चाहते थे कि यह सारी सृष्टि पशु-पक्षियों, वृक्षों, फलो-फूलों और समूची प्रकति के लिए जीवन्त रहे। उनका कहता था कि राजा का धर्म वैदिक जीवन का प्रसार करना है न कि अपनी प्रजा से आज्ञापालन करवाना। वे एक ब्राह्मण के रूप में जन्मे अवश्य थे परन्तु कर्म से क्षत्रिय माने जाते थे। उन्हे भार्गव ब्राह्मण के नाम से भी जाना जाता है। वे ब्रहमक्षत्रिय के नाम से भी प्रसिद्ध थे क्योंकि शस्त्र शास्त्र दोनों विद्याओं में वे निपुण थे।

एक कथा के अनुसार एक बार भगवान परशुराम जी कैलाश स्थित भगवान शंकर के आश्रम "अन्त:पुर में प्रवेश करने लगे। वहीं भगवान शंकर ने गणेश जी को द्वार पर खड़ा किया था कि कोई भीतर न आ जाए। गणेश जी भगवान परशुराम जी को रोकने हेतु आगे बढ़े परन्तु वे बलपूर्वक आगे बढ़ने का प्रयास करने लगे। गणेश जी ने उन्हें सूण्ड में लपेट कर नीचे फैंकने का प्रयास करते हुए समस्त लोकों में भ्रमण करवाया तथा भूतल पर पटक दिया। अब वे अत्यन्त क्रोधित हो उठे। दोनों में युद्ध छिड़ गया। भगवान परशुराम जी ने फरसे के प्रहार से गणेश जी का एक दांत तोड़ डाला तभी से वे एकदन्त कहलाए।

भगवान का भूमण्डल पर आने का प्रयोजन

जो इस सृष्टि के पालनकर्ता है जो समस्त ब्रह्माण्ड के निर्माता है तथा गतिशीलता देने वाले हैं उन्हीं के आवेशातार है भगवान श्री परशुराम जी। जिस प्रकार एक वृक्ष की विभिन्न शाखाएं होती हैं जो यहां - वहां फैली होती हैं परन्तु समस्त शाखाएं एक ही वृक्ष का अंश होती हैं तथा एक ही प्रकार के फल देती हैं उसी प्रकार भगवान परशुराम भी विशाल वृक्ष स्वरूपी परमात्मा, जिसकी जड़ें पाताल लोक में हैं, तना भूलोक में तथा शाखाएँ स्वर्ग लोक तक फैली हैं उसी ईश्वर रूपी वृक्ष की ही शाखा हैं। परमात्मा स्वयं अपने अंश स्वरूप में भूलोक पर आए और धर्म तथा सत्य की स्थापना की। वे पालनहारी श्री विष्णु के छठे अवतार हैं। उनका

आधार, उनका उद्देश्य, उनकी नियती तो सृष्टि को व्यवस्थित करने में ही प्रवृत्त रही। उनके भूलोक में आने के प्रयोजन ने उन्हें बैठने नहीं दिया। वे सदैव प्रवास पर रहते। समस्त भूमण्डल पर विचरण करते रहते। शस्त्र-शास्त्र में निपुण होने के नाते वे सभी में अपनी विद्याओं का संचार करते रहते। विचरण करते हुए उन्हे ज्ञात हुआ कि धरती पर अन्याय और अधर्म की अधिकता हो रही है। शक्तिशाली राजा निर्दोष प्रजा पर अत्याचार कर रहे हैं तथा उनकी अराजकता का सम्राज्य हो रहा है। यह देखकर उनका मन विचलित हो उठा। उन्होंने शस्त्र उठा लिए। उनके परसे की धार और धनुष से निकलते हुए अग्नि वर्षा समान वाणों ने धर्म, सत्य तथा न्याय की पुनः स्थापना की।

महायोद्धा की मर्यादा तो धर्म की स्थापना में होती है शत्रु की संख्या में नहीं। जब अंतस में उद्देश्य और लक्ष्य धर्म और समाज की रक्षा का हो तो शत्रु कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो उसकी हार निश्चित होती है। उन्होंने धर्म की रक्षाहेतु जीवन भर संघर्ष किया तथा चुन-चुन कर शत्रुओं का नाश किया।

जब-जब धरती पर अधर्म का साम्राज्य फैला है तब-तब भगवान धर्म रक्षा हेतु प्रकट हुए हैं ताकि धर्म और समाज की रक्षा की जा सके। जिसका जीवन परमार्थ में न्यौछावर हो जाए वह धर्म संरक्षक कहलाता है। श्री परशुराम जी ने आजीवन जप-तप ध्यान और संघर्ष किया। त्रेता युग में श्री राम से पूर्व उन्होंने धर्म को हानि नहीं पहुंचने दी। सदैव अन्याय से लड़ते रहे। न्याय के लिए युद्ध किए। बार-बार इस धरती को अधर्म शून्य किया तथा संन्यासी जीवन जिया। अन्याय, अधर्म और हिंसा की अधिकता होने पर भगवान अवतार लेकर भूमण्डल पर आते हैं तथा धर्म की स्थापना को सुनिश्चित तथा सुदृढ़ करते है।

अवतार लेकर भूमि पर प्रकट होकर भगवान समस्त मानवी कष्टों को प्राप्त करते हैं परन्तु दूसरे मानवों के कष्टों को वे हर लेते है कैसी अद्भुत बिडम्बना है!

कार्तवीर्या वध

दक्षिण भारत में एक राजा जिसका नाम कार्तवीर्यअर्जुन था वह बहुत शक्तिशाली तथा दुराचारी था वह हैहय वंशाधिपति था। उसने घोर तपस्या द्वारा भगवान दत्तात्रेय को प्रसन्न कर सहस्त्र भुजाएं तथा युद्ध में किसी से परास्त न होने का वर पाया था। भगवान परशुराम भी उस समय उसी राज्य में रहते थे। हैहय राज्य नर्मदा नदी के किनारे स्थित है तथा आजकल महेश्वर नाम से प्रसिद्ध है।

कार्तवीर्या जिन त्रिमूर्ति भगवान अर्थात् दत्तात्रेय की उपासना करता था उन्होंने स्वयं भगवान परशुराम जी से 'त्रिपुरा' रहस्य कहा था। त्रिमूर्ति का अर्थ है ब्रह्मा, विष्णु, महेश। पुराणों के अनुसार कार्तवीर्या भगवान विष्णु के सुदर्शन का मानव अवतार था। ऋषि वशिष्ठ के शाप (श्राप) का भाजन बनने से सहस्त्रार्जुन की मति मारी गई थी। दत्रात्रेय के उपासक होने के कारण कार्तवीर्य अत्यन्त शक्तिशाली हो गया। दत्तात्रेय देव ने कार्तवीर्या की भक्ति से प्रसन्न होकर उसे आकाश में उड़ने वाला स्वर्ण रथ भेंट स्वरूप दिया तथा हजार हाथों का त्रल प्राप्त करने का वरदान दिया इसीलिए उसे सस्त्रबाहु भी कहते थ यह सब पाकर कार्तवीर्या अत्यन्त शक्तिशाली हो गया। अब वह समस्त भूमण्डल पर छल, बल और कपट से राज करना चाहता था। वह समझता था कि भूमि पर ऐसा कोई भी नहीं जो उसके बल का सामना कर सके। इससे उसका चित्त गर्व से भर उठा। उसके पास इतनी शक्ति थी कि लंकापति रावण भी उससे डरता था। एक बार उसने रावण के साथ युद्ध किया उसे हराया तथा गोदावरी नदी पर बन्दी बनाकर रख दिया।

भार्गव वंशी ब्राह्मण इनके राज पुरोहित थे। भार्गव प्रमुख जमदग्नि से सहस्त्रार्जुन के अच्छे सम्बन्ध थे।

एक बार ऋषि जमदग्नि आश्रम से बाहर गए हुए थे कुछ राजवंशी आखेट के लिए उसी और आए जिस ओर जमदग्नि का आश्रम था। भूख

लगने पर वे भोजन की तलाश में आश्रम में आ पहुंचे। भोजन मांगने पर उन्हें सम्मान के साथ अनेकानेक व्यजनों से भोज कराया गया। वे प्रसन्न हो गए। पूछने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि समस्त भोजन ''कामधेनू गाय से प्राप्त हुआ था चमत्कारी गाय को देख कर वे स्तब्ध रह गए। उन्होंने कामधेनू उन्हें देने के लिए कहा बदले में उन्हे धन देने को तैयार हो गए परन्तु आश्रम के सभी साधुओं ने मना कर दिया। वे सब कामधेनू खरीदकर अपने राजा कार्तवीर्या को देना चाहते थे। साधुओं के मना करने पर वे बलपूर्वक गाय को अपने साथ ले गए। जब परशुराम को ज्ञात हुआ उन्होंने कार्तवीर्या की सारी फौज मार गिराई तथा कामधेनु वापिस ले आए। कार्तवीर्या के पुत्र बदले की भावना से वशीभूत हो आश्रम में उस समय आए जब परशुराम जी आश्रम से बाहर गए हुए थे। उन्होंने ध्यान में बैठे हुए जमदग्नि का सर धड़ से अलग कर दिया। आश्रम आकर जब श्री परशुराम ने अपने पिता का शव देखा तो वे अत्यन्त दुखी तथा क्रोधित हुए। उन्होंने अपने पिता का शरीर ध्यान से देखा उन्हे 21 चोटें लगी हुई थी। तभी उन्होंने शपथ ली कि वे 21 बार इन अधर्मियों का नाश करेंगे। उन्होंने कार्तवीर्या के सभी पुत्रों को मार दिया तथा सहस्त्रबाहू की सभी भुजाएं काट डाली तथा वाणों से उसे मौत के घाट उतार दिया। उनकी इस जीत का स्वागत चारों दिशाओं में हुआ। देवलोक में भी उनकी जयजयकार हुई। इन्द्रदेव ने उनकी विजय पर प्रसन्न होकर उन्हे अपना प्रिया वाण ''विजय ब्रह्मस्त्र'' भेंट किया। इन्द्र देव ने अपने इसी दिव्य वाण से कई दैत्यों, राक्षसों को ध्वस्त किया था। बाद में यही दिव्य वाण श्री परशुराम जी ने अपने प्रिय शिष्य कर्ण को भेट किया था।

भगवान परशुराम ने धर्म की स्थापना के लिए अधर्म का नाश किया क्योंकि धर्म की स्थापना के लिए अधर्म का नाश अनिवार्य होता है। अधर्म से सत्य नष्ट हो जाता है। आने वाली पीढ़ियों को धर्म और सत्य प्राप्त हो सके इसलिए उन्होंने अधर्म का नाश किया।

भगवान परशुराम जी ने प्रत्येक युग में धर्म की रक्षा की त्रेतायुग तथा द्वापर युग में उन्होंने अपने ज्ञान से, अपने शौर्य से तथा अपने पराक्रम से पृथ्वी की तथा धर्म की रक्षा की।

रामायण काल

त्रेतायुग मं राजा दशरथ के पुत्र श्री राम ने स्वयंवर के समय विशालकाय धनुष को जब भंग किया तो उसकी तीव्र ध्वनि से समस्त ब्रहाण्ड कांप उठा कठोर शब्द से तीनों लोक थर्रा गए, सूर्य के घोड़े मार्ग छोड़कर चलने लगे, दिग्गज चिंघाड़ने लगे, धरती डोलने लगी। शेष, कच्छप और वाराह कलमला उठे। देवता, राक्षस और मुनि कानों पर हाथ रखकर सब व्याकुल होकर विचारने लगे। जब सबको ज्ञात हुआ कि श्री रामचन्द्र जी ने धनुष को तोड़ डाला तब सभी श्री रामचन्द्र की जय बोलने लगे। प्रभु ने धनुष के टुकड़े धरती पर डाल दिए थे। ये देखकर सभी लोग प्रसन्न हो गए। ब्रहा, विष्णु, महेश आकाश से पुष्प बरसाने लगे तथा सिद्ध और मुनिश्वर लोग प्रभु की प्रशंसा करने लगे। किन्नर लोग रसीले गीत गाने लगे। देवांगनाएं नृत्य करने लगी, ब्रहाण्ड में जय जयकार की ध्वनि छा गई।

भगवान परशुराम ने जब धनुष के टूटने की ध्वनि सुनी तो वे आकाश मार्ग द्वारा मिथिलापुरी में राजा जनक के दरवार में पहुँच गए। श्री तुलसीदास कृत रामायण के अनुसार :-

तेहि अवतार सुनि सिवधनु भगां। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा। अर्थात् उसी अवसर पर शिवजी के धनुष का टूटना सुनकर भृगुकुल रूपी कमल के सूर्य परशुराम जी आए।

भगवान परशुराम जी का शौर्य, उनका व्यक्तितत्व उनका ओज, भक्ति, गुण, रहस्य प्रताप नीति तथा उनकी सुन्दरता का रामायण में वर्णन इस प्रकार से किया गया है।

(बालकाण्ड वर्णित) आठवां विश्राम तथा नौवा विश्राम

देखि महीप सकल सकुचाने। बाज झपट जनु जवा झुकाने।।
गौरी सरीर भुतिभल भ्राजा। भाल बिसाल त्रिपुंड विराजा।।

अर्थात् - इन्हे देखकर सब राजा सुकुचा गए मानो बाज के झपटने पर छिप गए हो। गोरे शरीर पर विभूति बड़ी फब रही है और विशाल ललाट पर त्रिपुण्ड विशेष शोभ्रा दे रहा है।

सीस जटा ससिबदनु सुहावा। रिस बस कछुक अरून होई।।
भुकुटि कुटिल नयन रिस रोत। सहजँहु चितवन मनुहु रिसाते आवा।।

अर्थात् - सिर पर जटा है। सुन्दर मुख क्रोध के कारण कुछ लाल हो आया है भौंहे टेढ़ी और आँखें क्रोध से लाल है। सहज ही देखते है, तो भी ऐसा जान पड़ता है मानो क्रोध कर रहे हैं।

बृषभ कंध उर बाहु बिसाला। चारु जनेउ माल मृगशाला।।
कटि मुनिबसन नुन दुइ बाँधै। धनु सर कर कठारू कलकाँधे

अर्थात् - बैल के समान ऊँचे और कठोर कन्धे हैं। छाती और भुजाएँ विशाल हैं। सुन्दर यज्ञोपवीत धारण किए, माला पहने और मृगचर्म लिए हैं कमर में मुनियों का वस्त्र वलकल और पीठ पर दो तरकस बाँधे है। हाथ में धनुष वाण और सुन्दर कन्धे पर फरसा धारण किए है।

सांत बेषु करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप!
धरि मुनितनु जनु बीर रसु आयउ जहँ सब भूप।

अर्थात् :-

शान्त वेश है, परन्तु करनी बहुत कठोर है।

स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता। मानो वीररस की मुनिका शरीर धारण करके, जहाँ सब राजलोग है वहां आ गया हो।।

देख भृगुपति बेष कराला। उठे सकत भय बिकल भुआला।

पितु समेत कहि निज नामा।
लगे करन सब दंड प्रणामा।।

अर्थात् :-

परशुराम जी का भयानक भेष देखकर सब राजा भय से व्याकुल हो उठे, खड़े हुए और पिता सहित अपना नाम कह-कहकर सब दण्डवत - प्रणाम करने लगे।

परशुराम जी हित समझकर भी जिसकी और देख लेते वह यही समझता मानो मेरी आयु पूरी हो गई। फिर जनक जी ने आकर उनके आगे सिर नवाया और सीता जी को बुलाकर उनसे प्रणाम कराया। भगवान परशुराम जी ने सीता जी को "सौभाग्यवती भव" आशीर्वाद दिया सीता जी की सखियां हर्षित हुईं और वे उन्हे अपने साथ पीछे की और ले गईं। फिर विश्वामित्र जी आए वे परशुराम जी से मिले तथा उन्होने दोनों भाइयों को श्री रामचन्द्र जी तथा लक्ष्मण जी को भगवान परशुराम जी के चरण कमलों पर गिराया। श्री राम-लक्ष्मण की सुन्दर जोड़ी देख श्री परशुराम जी ने आशीर्वाद दिया। परशुराम जी रामचन्द्र के रूप को एकटक निहारते रहे। उनके नयन उन्हे निहारते-निहारते स्तम्भित हो रहे थे फिर सभी और देखकर जानते हुए भी वे अनजान बनते हुए राजा जनक जी से पूछते हैं कि कहो यह भारी भीड़ कैसी है उनके शरीर में क्रोध की ज्वाला धधक रही थी।

जिस कारण सब राजा लोग आए थे राजा जनक ने वे सब समाचार कह सुनाए। जनक के वचन सुनकर परशुराम जी ने घूमकर दूसरी ओर देखा तो धनुष के टुकड़े पृथ्वी पर पड़े हुए दिखाई दिए।

अत्यन्त क्रोध में भरकर वे कठोर वचन बोले रे मूर्ख जनक! बता धनुष किसने तोड़ा? उसे शीघ्र दिखा नहीं' तो अरे मूढ़! आज मैं जहाँ तक तेरा राज्य है, वहाँ तक की पृथ्वी उलट दूँगा।।

राजा को अत्यंत डर लगा, जिसके कारण वे उत्तर नहीं दे पाए। तब श्री रामचन्द्र जी दोनों हाथ जोड़कर कहने लगे, ''हे नाथ! शिवजी के धनुष को तोड़ने वाला, आपका कोई एक दास ही होगा। क्या आज्ञा है? मुझसे क्यों नहीं कहते?'' यह सुनकर श्री परशुराम जी क्रोधित होकर कहने लगें सेवक वह है जो सेवा का काम करे। शत्रु का काम करके तो लड़ाई ही करनी चाहिए ''हे राम सुनो

''सुनहु राम जेहि सिवधनु तोरा, सहसबाहु समसो रिपु मोरा'' जिसने शिवजी के धनुष को तोड़ा है वह सहस्त्रबाहु के समान मेरा शत्रु है।

परशुराम जी के कठोर वचन सुनक़र श्री लक्ष्मण जी मुस्कुराए तथा उनसे कहने लगे कि लड़कपन में हमने बहुत सी धनुहियाँ तोड़ डाली। किन्तु आपने ऐसा क्रोध कभी नहीं किया। इसी धनुष पर इतनी ममता किस कारण से है?'' यह सुनकर भृगुवंशी ध्वजास्वरूप श्री परशुराम जी कुपित होकर कहने लगे:-

रे नृप बालक काल बल बोलता तोहि न संभार।
धनुही सम तिपुरारि धनु बिदित सकता संसार।।

अर्थात :-

अरे राजपुत्र! काल के वश होने से तुझे बोलने में कुछ भी होश नहीं है। सारे संसार में विख्यात, शिवजी का यह धनुष क्या धनुही के समान है?

इस प्रकार कुछ समय तक श्री लक्ष्मण और भगवान परशुराम जी की बहस चलती रहती है। श्री लक्ष्मण उन्हें कुछ-कुछ कहते रहते हैं तथा प्रभु और क्रोधित होते रहते हैं। वे कहते हैं कि हे लक्ष्मण मैं तुम्हे बच्चा समझकर कुछ नही कह रहा हूँ परन्तु तू मुझे निरा मुनि मत जान। मैं बालब्रह्मचारी और अत्यन्त क्रोधी हूँ

भुज बल भूमि भूप बिन कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही।।
सहसबाहु भुज छ्यद निहारा। परसु बिलोक महीप कुमारा।।

अर्थात :-

अपनी भुजाओं के बल से मैंने पृथ्वी को दुष्ट राजाओं से रहित कर दिया और बहुत बार उसे सुपात्रों को दान दे डाला। हे राज कुमार! सहस्त्रबाहु की भुजाओं को काटने वाले मेरे इस फरसे को देख।

उनके वार्तालाप को समस्त दरबार में उपस्थित लोग देख तथा सुन रहे थे। प्रभु परशुराम जी का क्रोध बढ़ता ही जा रहा था। कुमार लक्ष्मण भी विवाद को रुकने नहीं दे रहे थे। बात जब बहुत बिगड़ने को हुई तो गुरुविश्वामित्र जी ने दोनों हाथ जोड़कर कर परशुराम जी से कहा अपराध क्षमा कीजिए। बालकों के दोष और गुण को साधु लोग नहीं गिनते। परन्तु श्री लक्ष्मण जी कहां चुप होने वाले थे वे उन्हें और अधिक चिढ़ाने लगे। और बच्चे द्वारा इतनी हिम्मत दिखाने से श्री परशुराम जी अत्यन्त क्रोधित हो फरसा इधर-उधर घुमाने लगे। मर्यादा से बाहर बात निकलती देख श्री रघुनाथ जी ने इशारे से श्री लक्ष्मण जी को रोक दिया।

लक्ष्मण जी के उत्तर जो आहुति के समान थे श्री परशुराम जी के क्रोधरूपी अग्नि को बढ़ते देखकर रघुकुल जी के सूर्य श्री राम चन्द्र जी जल के समान शान्त करने वाले वचन बोले:-

नाथ करहु बालक पर छोहू। सूध दूधमुख करिअ न होहू।।
जो पै प्रभु प्रभाउ कछु जाना। तौ कि बराबरी करत अयाना।।

अर्थात:-

हे नाथ बालक पर कृपा कीजिए। इस सीधे और दूधमुँहे बच्चे पर क्रोध न कीजिए। यदि यह प्रभु का (आपका) कुछ भी प्रभाव जानता तो क्या यह बेसमझ आपकी बराबरी करता?

प्रभु श्री रामचन्द्र जी के श्री मुख से भगवान परशुराम जी के लिए ''प्रभु सम्माननीय सम्बोन्धन निकला है ध्यान देने वाली बात है श्री राम जी भी प्रभु हैं और श्री परशुराम जी भी प्रभु हैं दोनों ईश्वर हैं परब्रह के अवतार हैं उन्हीं के अवतार हैं यह तथ्य श्री राम जी भी जानते है और श्री परशुराम जी भी। यथार्थ में भगवान परशुराम जी इस समय की प्रतीक्षा कर रहे थे कि इतना ओजस्वी, बलशाली, दिन्य गुण सम्पन्न आए और धनुष को उठा सके। विधि के विधान का ज्ञान (ज्ञान) प्रभु को तो होता है परन्तु दूसरे लोग नहीं जान पाते।

श्री रामचन्द्र भगवान परशुराम जी से कहने लगे -''बालक यदि कुछ चपलता भी करे तो गुरू, पिता और माता मन में आनन्द से भर जाते हैं अत: इसे छोटा बच्चा और सेवक जानकर कृपा कीजिए। आप तो समदर्शी, सुशील और ज्ञानी मुनि है। श्री रामचन्द्र के वचन सुकर परशुराम जी शान्त हो गए।

श्री रामचन्द्र जी पुन: हाथ जोड़कर अत्यन्त विनय के साथ कोमल और शीतल वाणी के साथ बोले, ''हे नाथ सुनिए आप तो स्वभाव से ही सुजान है। आप बालक के वचनों पर कान न दीजिए उसे सुना अनसुना कर दीजिए। बालक का एक अलग स्वभाव होता है संतजन इन्हें कभी दोष नहीं लगाते। फिर उसने तो कुछ काम नहीं बिगाड़ा है हे नाथ! आपका अपराधी तो मैं हूँ।''

कृपा कोपु बधु बंधव गोसाईं। मो पर करिअ दास की नाईं।।
कहिअ बेगि जेहि बिधि रिस जाई। मुनिनायक सोई करों उपाई।।

अर्थात

हे स्वामी! कृपा, क्रोध, वध और बन्धन जो कुछ करना हो दास की तरह मुझ पर कीजिए। जिस प्रकार से शीघ्र आपका क्रोध दूर हो, हे मुनिराज! बताइये मैं वही उपाय करूँ।

इस प्रकार श्री रामचन्द्र जी बार-बार श्री परशुराम जी से क्षमा-याचना मांगते हैं परन्तु उनका क्रोध शान्त होते-होते पुनः तेज होता रहता है समस्त दरबार कंपित होता है श्री लक्ष्मण जी थोड़े दूर खड़े हैं परन्तु उनकी मन्द-मन्द मुस्कुराहट तथा बीच-बीच में संवाद उनके शान्त होते क्रोध को इस प्रकार तेज कर रहे हैं मानो शीतल पड़ती अग्नि में कोई घी की आहुति दे दे तो मंद अग्नि पुनः तीव्र हो उठती है। श्री रामचन्द्र जी अपनी विनय में श्री परशुराम जी के तेज का, गुणों का तथा शौर्य का बार-बार गुणगान कर रहे हैं। वे किसी भांति श्री परशुराम जी को शान्त करने का प्रयास कर रहे हैं।

वे उन्हें स्मरण करवा रहे हैं कि ब्राह्मणों के हृदय में बहुत अधिक दया तथा करुणा होती है। वे यहां तक कह डालते हैं:-

हमहि तुम्हहि सरिबरिकसि नाथा। कहहु न कहाँ चरण कहँ माथा।।
राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तोहारा।।

हे नाथ हमारी और आपकी बराबरी कैसी? कहिए न कहाँ चरण और कहाँ मस्तक। कहाँ मेरा राममात्र छोटा-सा नाम और कहाँ आपका परशुसहित बड़ा नाम।। हे देव हमारे तो एक ही गुण धनुष है और आपके परम पवित्र शम, दम, तप, शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता ये नौ गुण हैं, हे विप्र! हमारे अपराधों को क्षमा कीजिए। तब श्री परशुराम जी ने श्री रामचन्द्र जी से कहा कि आप मुझे साधारण विप्र मत जाने। मैं जैसा ब्राह्मण हूँ उसे सुनो। धनुष को स्त्रुवा, बाण को आहुति और मेरे क्रोध को अत्यन्त भयंकर अग्नि जानो। मैंने बहुत रणयज्ञ किए हैं। श्री रामचन्द्र जी विनयपूर्वक बोले क्षत्रिय शरीर धरकर जो युद्ध में डर गया उस ने कुल पर कलंक लगा दिया, और हम रघुवंशी रण में काल से भी नहीं डरते।

अब आगे भगवान रामचन्द्र जी उनके समक्ष अपना और उनका रहस्य प्रकट करते हैं

बिप्रबंस के असि प्रभुंताई। अभय होई जो तुम्हहि डेराई।।
सुनि मृदु वचन रघुपति के उरे पटल परसुधर मति के।।

अर्थातः-

ब्राह्मणवंश की ऐसी ही प्रभुता है (महिमा है कि जो आपसे डरता है वह सबसे निर्भय हो जाता है अर्थात जो भय रहित होता है वह भी आपसे डरता है श्री रघुनाथ जी के कोमल और रहस्यपूर्ण वचन सुनकर परशुराम जी ने श्री राम के स्वरूप को पहचान लिया। उन्होंने अपने चक्षु बन्द किए तो उन्हें श्री राम के चतुर्भुज स्वरूप के दर्शन हो गए। उन्होने उन्हें पहचान लिया और वे प्रफुल्लित हो उठे। उन्होंने कहा हे राम! हे लक्ष्मीपति धनुष को हाथ में लीजिये और इसे खींचिए। यह धनुष उन्हें स्वयं श्री विष्णु भगवान ने भेंट किया था अतः जब उन्होंने पहचान ही लिया तो वे अब उन्हे उनका धनुष सौंपते हैं।

परशुराम जी के मन में अत्यन्त आश्चर्य हुआ। तब वे श्री रामचन्द्र के समक्ष हाथ जोड़कर वचन बोले हे प्रभु आपसे मिलकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है उनका हृदय प्रेम से रोमांचित हो रहा था वे सहसा कह उठेः-

जय रघुबंस बनज बन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृसानू।।
जय सुर बिप्र धेनु हितकारी। जय मद मोग कोह भ्रमहारी।।

अर्थात

हे रघुकुलरूपी कमलवन के सूर्य! हे राक्षसों के कुलरूपी घने जंगलों को जलाने वाले अग्नि! आपकी जय हो! हे देवता, ब्राह्मण और गौका हित करने वाले। आपकी जय हो! हे मद, मोह, क्रोध और भ्रम को हरने वाले! आपकी जय हो तब वह पुनः-पुनः उनकी जय -जयकार कर रहे थे वे उनके गुणों का गुणगान करते हुए कह रहे थे हे विनय, शील, कृपा आदि गुणों के समुद्र और वचनों की रचना में अत्यन्त चतुर!

आपकी जय हो। हे सेवकों को सुख देने वाले, सब अंगो से सुन्दर और शरीर में करोड़ों कामदेवों की छवि धारण करने वाले आपकी जय हो!

उन्होंने श्री राम चन्द्रजी को महादेव के मनरूपी मानसरोवर के हंस कहा है तथा हाथ जोड़कर वे उनकी स्तुति कर रहे हैं।

कहि जय जय जय रघुकुलकेतू। भृगुतिगए बनहि तप हेतु।।

अर्थात:-

हे रघुकुल के पताकास्वरूप श्री रामचन्द्र जी आपकी जय, जय हो, जय हो। ऐसा कह कर भगवान परशुराम जी तप के लिए वन को जाने लगे। परन्तु वन जाने से पूर्व दशरथ नन्दन श्री राम चन्द्र जी ने जमदग्नि कुमार श्री परशुराम जी का विधिवत पूजन किया और भगवान परशुराम जी ने श्री रामचन्द्र जी की परिक्रमा की।

त्रेतायुग में जब श्री राम जी का समय आया तो भगवान परशुराम जी का समय अपने अन्तिम चरण में था। इस (काल) युग की यह विशेषता थी की एक ही (काल) युग में दो अवतार धरती पर विद्यमान थे।

धरती को अत्याचारियों से निजात दिलाने के लिए परब्रहा की योजना यही थी जब तक भगवान श्री परशुराम जी के रूप में धरती पर रहे उन्होंने समाज का कल्याण किया, निर्बल और सत्य की रक्षा की तथा धर्म की स्थापना की। परन्तु जब श्री रामचन्द्र जी अवतरित हुए तो श्री परशुराम जी उनके हाथों धरती का कार्यभार सौंपकर स्वयं तपस्या हेतु महेन्द्र पर्वत की ओर चले गए। श्री रामचन्द्र जी के चतुर्भुज स्वरूप के दर्शन से वे धर्म रक्षा के विषय पर निश्चिन्त हो गए उन्हें ज्ञात था कि अब धर्म रक्षा के लिए जिस शौर्य की आवश्यकता थी वह पृथ्वी पर अवतरित हो चुका है। अतएव उन्होंने तपस्या के निश्चय से अपने शस्त्र उन्हे प्रदान किए तथा स्वयं महेन्द्र पर्वत की ओर चले गए।

महाभारत काल

महाभारत का युद्ध कोरवों और पांडवों के मध्य हुआ। युद्ध का उद्देश्य था अधर्म पर धर्म की विजय। इस युद्ध में पांडवों की जीत हुई तथा कौरवों की पराजय। कौरवों में दुर्जनों की संख्या अधिक हो गई थी और पांडव सत्य तथा धर्म के मार्ग पर प्रशस्त थे। कौरव पक्ष में अत्यन्त शक्तिशाली तथा दिव्य शक्तियों से भरपूर योद्धा थे जैसे भीष्म पितामह, गुरु दोणाचार्य, कर्ण। इन सभी के होते हुए भी उन्हे पराजित होना पड़ा क्योंकि युद्ध का मूल तत्व पाप तथा घृणा था जो कि अधर्म है। इन सभी में इतना सामर्थ्य था कि यह युद्ध पर विजय पा सकते किन्तु पाप के भार से इनकी पराजय हो गई।

ऐसे बहुत से कारक थे जिनके कारण सभी कौरवों को जान गंवानी पड़ी। कर्ण जैसे महारथी युद्ध को कोई भी दिशा प्रदान करने में समर्थ थे परन्तु उसको मिले हुए विविध श्राप और उनके प्रभाव से युद्ध के परिणाम उनके विपरीत रहे। कर्ण को गुरु परशुराम भगवान से श्राप मिला था इसके अतिरिक्त भी कर्ण को बहुत से श्राप मिले थे।

कौरवों में दया, धर्म और सत्य का अभाव था उनकी तरफ से लड़ रहे महारथी कर्ण के विषय में विस्तार से जानना आवश्यक है क्योंकि वह एक ऐसा चरित्र है जो सभी द्वारा उपेक्षित है। कर्ण का जन्म जिन परिस्थितियों में हुआ वह सब प्रकरण दयनीय है। कर्ण सूर्य और कुन्ती के पुत्र होते हुए भी उन्हें पांडवो के विरुद्ध युद्ध लड़ने के लिए विवश होना पड़ा। जिन परिस्थितियों के वशीभूत होकर कर्ण को कौरवों के साथ रहना पड़ा यदि सूक्ष्मता से निरीक्षण किया जाए तो सब कुछ स्वाभाविक तथा सहज प्रतीत होता है। एक ऐसा बालक जिसे उसकी मां लोकलाज से अपना न सके, उसका व्यक्तित्व कैसा हो सकता है कर्ण को तो यह ज्ञान भी नही था कि उसके माता-पिता कौन है जब उसे अपने माता-पिता के विषय में ज्ञात होता है तो उसके मन में अनेक भाव उत्पन्न होने लगते हैं। वह समझ नहीं पाता कि वह अपनी मां के आँचल

में छुपकर ममता का अनुभव करे या फिर निर्दोष होते हुए जो दंड उसे उसकी मां ने दिया उस पर क्रोधित हो। समाज के बन्धन में जकड़ी उसकी मां उसे संसार के समक्ष अपना नहीं सकती थी और उसकी मनोस्थिति समझने वाला कोई दूसरा था नहीं।

कर्ण बाल्यकाल से ही शूरवीर, तीक्ष्ण बुद्धि तथा स्भाविमान से परिपूर्ण था। अपने दूसरे मित्रों की भांति वह भी अच्छी शिक्षा प्राप्त करना चाहता था। गुरु द्रोणाचार्य तथा देवव्रत भीष्म अत्यन्त पराक्रमी थे। कर्ण उनके व्यक्तित्व तथा शौर्य से प्रभावित हो उनके गुरु श्री परशुराम जी से शिक्षा ग्रहण करना चाहता था। बाधा यह थी कि श्री परशुराम जी तब ब्राह्मणों को ही शिक्षा देते थे।

कर्ण ने भगवान से झूठ बोलनेहुए अपने आप को ब्राह्मण बताया। इस प्रकार उसने झूठ के आधार पर शस्त्र की उच्च शिक्षा प्राप्त की। उसकी कुशाग्र बुद्धि, अनुशासन प्रियता तथा रण कौशलता से भगवान इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने उसे दिव्य ब्रह्म अस्त्र भेंट स्वरुप दे दिया। उन्हीं दिव्य अस्त्रों से कर्ण इतना शक्तिशाली हो गया कि वह किसी को भी सरलता से पराजित करने में सक्षम हो गया।

कर्ण का मानसिक द्वन्द्व, उसका द्वेष, मां की ममता का मलाल, समाज द्वारा उपेक्षित होना तथा दुर्योधन की कूटनीति यह सभी ऐसे कारण थे जिन्होंने कर्ण को कुरूक्षेत्र में अपने ही भाइयों के समक्ष युद्ध करने के लिए प्रस्तुत कर दिया। कौरव अति भ्रष्ट हो चुके थे। महाभारत में बहुत सी ऐसी परिस्थितियां आती है जहां कर्ण विवश दिखाई पड़ते है।। उनकी आत्मा तड़पती दिखाई पड़ती है परन्तु वे कौरवों के प्रति वचनबद्ध हैं।

जब कौरव चक्रव्यूह की रचना करके अर्जुन पुत्र अभिमन्यु को फंसाते हैं तथा सभी एक साथ प्रहार करते हुए उसे तड़पा-तड़पा कर मार रहे होते हैं उस समय सामने रथ पर खड़ा कर्ण मानों खून के आँसू रो पड़ता है। परन्तु उसकी यह विवशता है कि वह प्रकटतया रो भी नहीं

सकता। उसे अपने भाव सभी से छुपाने पड़ते हैं। अश्वत्थामा, दु:शासन, शकुनी, दुर्योधन तथा अन्य अभिमन्यु पर प्रहार कर रहे होते हैं। दुर्योधन कहता है कि अभी उसे सूर्यास्त तक केवल पीड़ा देनी है। जब वह जीवन की भीख मागेंगा तब उसे मृत्यु दे देना। कर्ण से यह सब सहन नहीं होता वह रथ से नीचे उतरता है तथा अभिमन्यु को गले से लगा कर आँसू बहाते हुए कहता है कि "हे पुत्र! मेरे और अर्जुन के पराक्रम से पहले तुम्हारे पराक्रम की जय-जयकार हुआ करेगी। तुम आज अमर होने जा रहे हो। तुम्हारे जैसा पराक्रमी धरती पर कभी-कभी ही जन्म लेता है।" इसी के साथ वह उसकी पीठ पर तलवार से वार करके उसका वध कर देता है। अभिमन्यु वध के पीछे कर्ण की मंशा यही थी कि उसे पीड़ा से मुक्ति मिले दुर्योधन के यह कहने पर कि, "तुमने इसे क्यों मारा सूर्यास्त में अभी समय है" कर्ण तड़पते हृदय से कह उठता है कि "जब अभिमन्यु जैसे योद्धा शूरवीर मरते हैं तो सूर्यास्त हो ही जाता है।"

कर्ण की परिस्थितियां, उसका स्वभाव, उसकी वेदना हमारे मन में उनके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त उसका शौर्य, उसका पराक्रम उसका अकेले अपने दम्भ पर महाभारत काल में अपनी पहचान बनाना हमें उसके चरित्र की ओर आकर्षित करता है।

भगवान परशुराम के वे प्रिय शिष्य थे उनके गुणों से, कौशल से तथा पराक्रम से वे परिचित थे। कर्ण के सद्गुणों को वे पहचान चुके थे। वे अधिकतर समय कर्ण के साथ व्यतीत करते थे परन्तु उन्हें झूठ से घृणा थी। कोई शिष्य उनसे झूठ बोले यह उनसे सहन नहीं हो सकता था।

जब कर्ण की शिक्षा अपने अन्तिम चरण में थी एक दोपहर को गुरु परशुराम कर्ण की जंघा पर सिर रखकर विश्राम कर रहे थे। कुछ देर बाद कहीं से बिच्छू आया और उसकी दूसरी जंघा पर घाव बनाने लगा। गुरु परशुराम जी का विश्राम भंग न हो इसलिए कर्ण बिच्छू को दूर न हटाकर उसके डंक को सहता रहा। निद्रा टूटने पर गुरु जी ने देखा कि कर्ण की जांघ से बहुत रक्त बह रहा है। उन्होंने कहा कि केवल किसी

क्षत्रिय में ही इतनी सहनशीलता हो सकती है कि वह बिच्छू के डंक को सह सके, न कि ब्राह्मण में। इसी बात पर परशुराम भगवान उससे क्रोधित हो उठे। उन्होंने उसे मिथ्या भाषी के कारण श्राप दिया कि जब भी कर्ण को उनकी दी हुई शिक्षा की सर्वाधिक आवश्यकता होगी, उस दिन वह उसके काम नहीं आएगी।

कर्ण जो कि स्वयं नहीं जानता था कि वह किस वंश से है, ने अपने गुरु से क्षमा मांगी और कहा कि उसके स्थान पर यदि कोई और शिष्य भी होता तो वो भी ऐसा ही करता। यद्यपि कर्ण को क्रोधवश श्राप देने पर भगवान को ग्लानि हुई परन्तु वे अपना श्राप वापिस नहीं ले सकते थे। जब उन्होंने अपना विजय नामक धनुष उसे प्रदान किया तब ये आशीर्वाद दिया कि उसे वह वस्तु मिलेगी जिसे वह सर्वाधिक चाहता है और वह अमिट प्रसिद्धि। कुछ लोककथाओं में माना जाता है कि बिच्छू के रूप में स्वयं इन्द्र थे।

विनाश को टालना

यदि एक ब्रह्मास्त्र भी शत्रु के खेमे पर छोड़ा जाए तो वह न केवल उस खेमे को नष्ट करता है बल्कि उस पूरे क्षेत्र में 12 से भी अधिक वर्षों तक अकालग्रस्त कर देता है और यदि दो ब्रह्मास्त्र आपस में टकरा दिए जाएं तो मानो प्रलय ही हो जाता है। यदि ऐसा होता तो इससे समस्त पृथ्वी का विनाश हो जाता इस प्रकार नए भूमण्डल का निर्माण करना पड़ता। महाभारत के युद्ध में दो ब्रह्मास्त्रों की स्थिति तब आई जब ऋषि वेदव्यासजी के आश्रम में अश्वत्थामा और अर्जुन ने अपने-अपने ब्रह्मास्त्र चला दिए। तब श्री कृष्ण जी ने उस टकराव को टाला तथा अपने-अपने ब्रह्मास्त्रों को लौटा लेने को कहा। अर्जुन को तो ब्रह्मास्त्र लौटाना आता था, परन्तु अश्वत्थामा यह नहीं जानता था कि ब्रह्मास्त्र कैसे लौटाया जाता है।

धर्मयुद्ध में कौरवों और पांडवों के मध्य युद्ध के समय भी भगवान परशुराम जी ने पृथ्वी के विनाश को रोक दिया। कर्ण गुरु परशुराम के

श्राप के कारण ब्रह्मास्त्र चलाना भूल गया था, नहीं तो वह युद्ध में अर्जुन का वध करने के लिए अवश्य ही इसका प्रयोग करता और अर्जुन भी अपने बचाव के लिए अपना ब्रह्मास्त्र चलाता; और पूरी पृथ्वी का विनाश हो जाता। इस प्रकार भगवान परशुराम जी ने कर्ण को श्राप देकर पृथ्वी का विनाश टाल दिया। गीता में लिखित श्लोक के अनुसारः-

यदा यदा हि धर्मस्य गलानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्हम।।

अर्थात - श्रीमदभगवत गीता के उपरोक्त श्लोक के अनुसार जब-जब धर्म को हानि होती है तब-तब धर्म की रक्षा हेतु मैं धरती पर अवतार लेता हूँ। मैं अधर्म की प्रबलता को क्षीण करता हूँ तथा धर्म की स्थापना करता हूँ।

भगवान के श्री मुख से निकले उपरोक्त श्लोक के अनुसार जिस सृष्टि की रचना ईश्वर ने स्वयं अपने हाथों से की है उसका अधर्मियों के हाथों से विनाश वे नहीं होने देते। उसकी वे सदैव रक्षा करते हैं और उसकी रक्षा तभी हो सकती है जब धर्म की रक्षा हो और धर्म की रक्षा के लिए वे बार-बार पृथ्वी पर अवतरित होते हैं।

धरती माता के श्राप का प्रभाव

यहां यह बताना अति आवश्यक होता है कि धरती माता के श्राप से भी पृथ्वी को दुर्जनों से निजात मिली थी। धरती माता का श्राप यह था कि कर्ण के जीवन के सबसे निर्णायक युद्ध में धरती उसके रथ के पहिए को पकड़ लेगी। उस दिन के युद्ध में कर्ण ने अलग-अलग रथों का उपयोग किया लेकिन हर बार रथ का पहिया धरती में धंस जाता अन्यथा वह उस निर्णायक युद्ध में अर्जुन पर भारी पड़ता। आरम्भ में जब भगवान परशुराम का जन्म नहीं हुआ था उस समय की बात है जब धरती माता पाप के भार से संतप्त हो चुकी थी तब वह परब्रह्म के पास विनती लेकर गई और कहने लगी "हे ईश्वर जिस सृष्टि का निर्माण आपने

अपने करकमलों से स्वयं किया था उसकी रक्षा करें। दुष्टों के दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे अपराधों से मुझे मुक्ति दे प्रभु!'' परब्रह्म ने धरती से कहा कि वे स्वयं परशुराम रूप.में अवतार लेकर धरती का भार हल्का करने भूलोक में आ रहे हैं।

भगवान परशुराम द्वारा कर्ण को दिया गया श्राप तथा धरती का कर्ण को दिया गया श्राप दोनों ही महाभारत में अधर्मियों की पराजय के बड़े कारण बन गए। इस प्रकार भगवान परशुराम ने समस्त भूमि की दुष्टों से रक्षा की तथा धर्म की स्थापना की।

मानव के भीतर करुणा और दया भाव का होना अनिवार्य होता है। इनके अभाव से अधर्म को दृढ़ता मिलती है। धर्म रक्षण हेतु अधर्मियों को दण्ड देना आवश्यक होता है। अधर्म से सत्य का नाश होता है अर्ध के प्रचण्ड वेग को समूल नष्ट करने के लिए अधर्मियों का नाश आवश्यक है। इसी प्रकार चारों वेदों को जानने वाले भगवान परशुराम जी ने शौर्य और पराक्रम से धरती पर धर्म की पुनः स्थापना की।

एक बार राजकुमारी अंबा के अनुरोध पर भगवान परशुराम ने भीष्म को युद्ध के लिए ललकारा। दोनों अत्यन्त पराक्रमी थे। दोनों में 23 दिनों तक भीषण संग्राम चला। अन्त में श्री परशुराम जी के पिता श्री जमदग्नि प्रकट हुए तथा उन्होंने भगवान को बताया कि भीष्म को अपने पिता द्वारा इच्छा मृत्यु वरदान प्राप्त है अतः इस युद्ध का कोई आधार ही नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि ''ब्राह्मण का कार्य रक्त बहाना नहीं अपितु वेद शास्त्र अध्ययन अध्यापन करना है न कि शस्त्र उठाना। तत्पश्चात यह युद्ध विना परिणाम के समाप्त हो गया।

दान प्रियता

भगवान परशुराम तपस्या हेतु महेन्द्र पर्वत पर जा रहे थे किन्तु जाने से पूर्व वे अपने जीवन भर की कमाई सुपात्रों को दान कर रहे थे। द्रोणाचार्य जब उनके पास पहुँचे तब तक वे सब कुछ दान कर चुके थे।

तब श्री परशुराम जी ने दयाभाव से द्रोणाचार्य को कोई भी अस्त्र-शस्त्र चुनने को कहा। बुद्धिमान द्रोणाचार्य ने कहा कि मैं आपसे सभी अस्त्र-शस्त्र उनके मन्त्रों सहित लेना चाहता हूँ ताकि आवश्यकता अनुसार उनका प्रयोग किया जा सके। परशुराम जी ने कहा एवमस्तु अर्थात ऐसा ही हो इस से द्रोणाचार्य अत्यन्त पराक्रमी तथा शस्त्र विद्या निपुण हो गए।

महाभारत का युद्ध पवित्र भूमि कुरुक्षेत्र में हुआ था क्योंकि कुरुक्षेत्र भूमि तपस्या स्थली के रुप में प्रसिद्ध रही है। ऋषि, मुनि, योगी, तपस्वी दिव्य शक्तियों से भरपूर जन सभी ने तपस्या हेतु कुरुक्षेत्र की भूमि को ही उचित माना चूंकि महाभारत का युद्ध था इसलिए कुरुक्षेत्र की भूमि को उचित समझा गया। भगवान परशुराम जी ने कुरुक्षेत्र की पवित्र भूमि पर वर्षों तप किया है। समाज के कल्याण हेतु यज्ञ किए। उनके तप, संघर्ष तथा कर्म से पृथ्वी पर हजारों वर्षों तक शान्ति स्थापित रही तथा जनमानस के भीतर धर्म के प्रति श्रद्धा भाव से सुसस्कारी सभ्यता का निर्माण हुआ। दयाशील, ज्ञानवान, कर्मरत समाज में परोपकारी मानसिकता प्रबल होती है तथा परोपकारी मानसिकता से ही धर्म का रक्षण संभव है।

अश्वमेध यज्ञ

भगवान परशुराम ने जब श्री रामचन्द्र जी के दर्शन किए तो उन्होंने अपने शस्त्र उन्हें प्रदान कर दिए। अब वे श्री राम चन्द्र जी को धरती का कार्यभार सौंप कर तप करना चाहते थे। इसी मन्शा के साथ उन्होंने अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ संपूर्ण होने पर जब पुरोह्रित को दक्षिणा देने का समय आया तो उन्होंने समस्त परशुराम क्षेत्र जो दक्षिण में उन्होने बसाया था वह सभी भार्गव ऋषि कश्यप को दे दिया। ऋषि कश्यप उस समय उनके पुरोहित थे। उस क्षेत्र का राज-पाठ अब क्षत्रियों को दिया जाने लगा। इसके लिए उन्होने धर्मप्रिय क्षत्रियों को राज-पाठ सम्भालने का आग्रह किया परन्तु भगवान परशुराम से भयभीत होकर वे आगे नहीं आ रहे थे। उस समय ऋषि कश्यप ने परशुराम जी से

कहा:- ''हे प्रभु! अब यह क्षेत्र आप दान कर चुके हैं अतः अब धर्म के अनुसार आपका यहां रहना उचित नहीं है।

ऐसा सुन कर भगवान परशुराम जी ने सबको आशीर्वाद दिया तथा वे तप हेतु महेन्द्र नगरी की ओर चल दिए।

भगवान परशुराम चिरंजीवी हैं पुराणों के अनुसार वे अभी भी महेन्द्र गिरी पर तपस्यारत हैं तथा जब कल्कि अवतार प्रकट होंगे तब भगवान परशुराम ही उन्हे वेदों का ज्ञान देंगे तथा शस्त्र-शास्त्र प्रशिक्षण देंगे। धरती पर कलियुग के प्रभाव से फैले हुए अधर्म का नाश कल्कि अवतार ही करेंगे। यह अवतार परब्रह्म का दसवां अवतार होगा।

युग-युगान्तर आचार्य

पर ब्रह्म ने जब सृष्टि की रचना की तो उसके सुचारू रूप से चलाने हेतु समय-समय पर स्वयं अवतार लेकर भूलोक में शान्ति, धर्म तथा ज्ञान का संचार करते रहे। यह ज्ञान उन्होने परोक्ष रूप से दिया।

भगवान परशुराम जी को यदि युगान्त आचार्य कहा जाए तो यह सम्बोधन उनके लिए उचित रहेगा। उनकी उपस्थिति त्रेता युग, द्वापर युग में रही तथा पुराणों के अनुसार कलयुग में भी होगी उनकी उत्पत्ति त्रेता युग में हुई। वे अति कुशाग्र बुद्धि थे। शौर्य, पराक्रम में उनके समान कोई नहीं था। वेद वेदांत उन्हे कण्ठस्थ थे। शास्त्र विद्या में वे निपुण थे। उन्होंने भगवान शिव से शस्त्र विद्या प्राप्त की थी। वे शिव आश्रम में कई वर्ष तक रहे। उन्होंने अपना ईष्ट देव शिव को ही माना। शस्त्र-शास्त्र में निपुण होने के बाद उन्होंने समग्र समाज को सुचारू रूप से चलाने हेतु अध्यापन कार्य किया।

भगवान परशुराम जी शस्त्र विद्या के श्रेष्ठ ज्ञाता थे वे केरल के मार्शल आर्ट ''कलरी पायट्टु'' की उतरी शैली ''वदक्कन कलरी'' के संस्थापक आचार्य आदि गुरु हैं। वदक्कन कलरी अस्त्र-शस्त्रों की प्रमुखता

वाली शैली है। कलरी का शाब्दिक अर्थ है ''आत्म रक्षण'' अथवा ''आत्म अनुशासन'' आज भी परशुराम वल्लवभट्ट कलरी अकादमी का संचालन अत्यन्त कुशलता से हो रहा है। वहाँ देश ही नहीं बल्कि पूरे विश्व से युवा शिक्षा प्राप्त करने आते हैं इस प्रकार उन्होंने जो शिक्षा भगवान शिव से प्राप्त की वह शिक्षा परोक्ष रूप से पूरे विश्व को प्रदान कर रहे हैं।

द्वापर युग में वे द्रोणाचार्य तथा भीष्म के गुरु हुए। भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य की युद्ध कला से समस्त ब्रह्मांड परिचित है। उनके पराक्रम से अनुमान लगाया जा सकता है कि उनके गुरुदेव भगवान परशुराम कितने शूरवीर होंगे।

धर्मयुद्ध के महायोद्धा अंगराज कर्ण ने भी शस्त्र विद्या भगवान परशुराम जी से प्राप्त की। कर्ण कलरी पायट्टु में परागंत थे तथा उन्होंने यह विद्या अपने गुरु श्री परशुराम जी से प्राप्त की थी।

भगवान कृष्ण ने सुदर्शन चक्र चलाने की विद्या भगवान परशुराम से प्राप्त की। इस प्रकार उन्होंने द्वापर युग में शिक्षा-दीक्षा का संचार किया तथा धर्म की स्थापना की। वे चिरंजीवी हैं।

पुराणों के अनुसार कलयुग के अन्त में शाम्भल नामक गांव में कल्कि अवतार होंगे। भगवान परशुराम उन्हें शस्त्र विद्या का प्रशिक्षण देंगे और वही कल्कि अवतार समाज में फैले हुए अधर्म का नाश करके धर्म रक्षा करेंगे। वे कल्कि अवतार को भगवान शिव की उपासना करके उनसे दिव्यास्त्र प्राप्त करने को कहेंगे। इस प्रकार वे समय-समय पर गुरु बन कर धरती के भार को हल्का करते रहेंगे तथा धर्म रक्षण को सदैव प्रतिबद्ध रहेंगे।

परब्रह ने सृष्टि की रचना की तथा सदैव उसका भरण-पोषण तथा रक्षण किया। समय-समय पर अवतार लेकर अधर्म का नाश किया तथा सत्य और धर्म की रक्षा की।

चतुर्थ अध्याय

समस्त भारतवर्ष में परशुराम तीर्थ स्थल

अरूणाचल प्रदेश भगवान परशुराम की तीर्थ स्थली के रूप में विश्व प्रसिद्ध है। यहां पर दूर-दूर से भक्त जन दर्शन हेतु आते हैं, यहां की भूमि पर बहने वाली लोहित नदी के किनारे परशुराम कुण्ड है जहां पर मकर संक्रान्ति को हर वर्ष मेला लगता है तथा लाखों की संख्या में श्रद्धालु आते हैं।

हजारों वषों तक पृथ्वी पर सत्य और धर्म की स्थापना हेतु युद्ध करते-करते भगवान के हाथ से परसा चिपक गया। उन्होनें कई तीर्थ स्थलों की यात्रा की परन्तु परसा हाथ से नहीं छूटा। कुछ तपस्वियों, ऋषियों के परामर्श से वे अरूणाचल प्रदेश स्थित ब्रह्म कुण्ड में आए। कुण्ड में हाथ डालते ही उनके हाथ से परसा छूट गया। वर्षो परसा हाथ से चिपका रहा इसी से उन्हें, परसे पर क्रोध आया उन्होने पूरी शक्ति से उसे पर्वत की ओर फैंका। परसा इतनी शक्ति से फैंका गया था कि जहां वह पड़ा वहाँ से जल धारा फूट पड़ी। यही स्थान परशुराम. कुण्ड के नाम से विख्यात हो गया। भारतवर्ष के महान तीर्थ स्थानों में से एक परशुराम कुण्ड तीर्थ स्थान है। नवंबर से फरवरी माह तक यहां पर अत्यंत विशाल मेला लगता है। दूर-दूर से श्रद्धालु यहां आते है। उनकी यात्रा को सुविधाजनक बनाने के लिए स्थान स्थान पर लंगर तथा अन्य आवश्यक सामान की व्यवस्था की जाती है। यहां का प्राकृतिक सौंन्दर्य अनूठा है। वहां पहुंचने पर परब्रह्म की अनुभूति होती है तथा मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।

महाराष्ट्र के जिला नासिक में पौराणिक मंदिर है "त्रयंबकेश्वर

मंदिर"। त्रयबंक कस्बे में स्थित यह ज्योतिर्लिग बारह मुख्य ज्योतिर्लिगों में से एक है। यह शिव मंदिर श्रद्धालुओं की आस्था का मुख्य केन्द्र है यह मंदिर ब्रहमगिरि पर्वत से निकलने वाली पवित्र गोदावरी नदी के किनारे स्थित है। इसी मंदिर में भगवान परशुराम ने कई वर्ष तपस्या की है।

नील पर्वत की चोटि पर स्थित श्री नीलाबिंका, दतात्रेय माता अंबा मंदिर स्थित है, भगवान परशुराम यहां वर्षों तपस्या में लीन रहे। जब यहां पर भगवान तपस्या कर रहे थे तो सभी देवियां-माता अंबा, माता रेणुका तथा माता मनअम्बा उनके दर्शन के लिए आईं। देवियां कुछ समय तक यहीं रही। जब वे वापिस जाने लगी तो भगवान परशुराम ने उनसे यहीं रहने का आग्रह किया।

उन्होनें सभी देवियों के लिए एक सुन्दर मंदिर बनवाया। भगवान दतात्रेय इसी मंदिर में कुछ वर्ष रहे। इसी मंदिर के दाईं ओर नीलकण्ठेश्वर महादेव मन्दिर स्थित है। यह मंदिर नील पर्वत के पास खण्डोवा जिले में स्थित है। इसी के पास अन्नपूर्णा आश्रम तथा रेणुका मंदिर स्थित हैं।

गुजरात में स्थित त्रिवेणी तीर्थ स्थल हिन्दुओं का एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। यहां पर तीन नदियों का संगम होता है तथा वे सागर में मिलती हैं। यह तीन नदियां हैं हिरण नदी, कपिला नदी तथा सरस्वती नदी। यह तीर्थ स्थल मोक्ष को प्रदान करने वाले स्थल के नाम से विख्यात है। इसे मोक्ष का तीर्थ भी कहा जाता है त्रिवेणी के पवित्र तट पर परशुराम मंदिर स्थित है। कई वर्ष तक धरती को दुष्टों से मुक्त करने के लिए उन्होंने युद्ध लड़े तथा उनका संहार किया। समाज में शांति की स्थापना की। परन्तु वे दुर्जनों का रक्त बहाते-बहाते स्वयं दुखी हो चुके थे। उन्हें दुख था कि पवित्र भूमि पर अन्याय तथा अराजकता को समूल नष्ट करने के लिए उन्हें रक्त बहाना पड़ रहा है। भले ही यह रक्त दोषियों का था परन्तु फिर भी उनकी अर्न्तआत्मा अशान्त थी। इसलिए मन का संतोष प्राप्त करने के लिए भगवान परशुराम ने अपने आपको दंड दिया। उन्होने

अपने साथ अत्यंत कठोर व्यवहार करते हुए तप किया। अपने आपको दोषी मानते हुए उन्होंने कुछ वर्ष यहीं रहकर पश्चाताप किया। जब इन्हें लगा कि उनका मन शान्त हो चुका है तथा उनका पश्चाताप पूरा हो चुका है तब उन्होंने वहां से प्रस्थान किया। इस स्थान को ''परशुराम तपोभूमि'' के नाम से जाना जाता है। यहां पर भगवान परशुराम का एक अत्यन्त सुन्दर मंदिर है तथा दो प्राचीन कुण्ड हैं। श्रद्धालु इन कुण्डों में स्नान करके परम आनन्द तथा शान्ति प्राप्त करते हैं।

केरल कोकण के जनक

दक्षिण में समुंद्र अपनी समस्त शक्ति से आगे बढ़ते हुए और विशालकाय हो रहा था। पुराणों के अुनसार भगवान परशुराम ने समुद्र को परशु के प्रहार से पीछे हटाया तथा उस भूमि पर केरल और कोंकण नामक प्रदेशों को बसाया।

दक्षिण भारत के पजाका में भगवान परशुराम जी द्वारा निर्मित अत्यन्त भव्य मन्दिर है। कोंकण को बसाने वाले भगवान परशुराम की पूजा महाराष्ट्र में नियमित रूप से की जाती है। रत्नगिरि तहसील महाराष्ट्र में भगवान परशुराम को मानने वाले श्रद्धालुओं की संख्या सबसे अधिक है। कोकणके लोग कोंकण को परशुराम भूमि के नाम से जानते हैं। दक्षिण भारत में समुद्री तटों पर परशुराम के बहुत ही आकर्षक तथा भव्य मन्दिर है।

महाराष्ट्र के शिवपुरी में भगवान परशुराम मन्दिर और गुजरात में अग्नि मन्दिर विश्व प्रसिद्ध मन्दिर है इन भव्य मन्दिरों का अवलोकन करना सौभाग्य की बात है।

कन्याकुमारी में भगवान परशुराम ने आदर्श मन्दिरों की स्थापना की। उन्होंने कन्याकुमारी में धर्म संस्था की स्थापना की जिसका नाम अय्यपा है। कन्याकुमारी के घने जंगलों में सावरीमाला पर्वत की चोटी पर स्थित अयप्पा संस्था में आने वाले वीर योद्धाओं को उन्होने ऐसा प्रशिक्षण दिया

जैसे महाभारत कालीन कर्ण को प्रशिक्षण दिया था और ऐसी ही शिक्षा वे कलयुग के अन्त में भगवान कल्कि को देंगे।

केरल की पवित्र भूमि पर उन्होंने भिन्न-भिन्न देवों के 108 मन्दिरों का निर्माण करवाया इन मन्दिरों के माध्यम से उन्होंने मार्शल आर्ट नामक विद्या जो दक्षिण में कलरी पायट्टु के नाम से प्रसिद्ध है, की स्थापना की। इस विद्या में शिष्य को इस प्रकार प्राशिक्षित किया जाता है कि वह आत्म रक्षण, आत्म अनुशासन तथा एकाग्रता आदि गुणों से सन्पन्न हो सके। उपरोक्त गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही सशक्त समाज की नींव रखने में समर्थ हो सकता है।

भगवान परशुराम ने कई मन्दिरों का निर्माण करवाया जिनमें मुख्य हैं शिव-मन्दिर, गणेश मंदिर और सुब्रहमन्यम मन्दिर। परोक्ष रूप में भगवान परशुराम ने सदैव सत्य, कर्म, भक्ति, ज्ञान तथा ध्यान का पाठ पढ़ाया। उन्होंने अन्याय का विरोध करते हुए सदैव न्याय के मार्ग पर चलने की शिक्षा दी इसी प्रकार उन्होंने कर्नाटक में मोक्ष को प्राप्त करने वांले सात मुक्ति स्थलों की स्थापना की। इन तीर्थ स्थलों के दर्शन मात्र से मनुष्य का जीवन सफल हो जाता है। उन्होंने समस्त जीवन समाज और धर्म को अर्पण कर रखा था। एक वही ऐसे देव हैं जिन्होने त्रेतायुग एवं द्वापर युग दोनों युगों में दुष्टों से धर्म व समाज की रक्षा की तथा सभी का मार्गदर्शन किया। उन्होंने सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने हेतु समस्त जीवन समर्पित कर दिया। जीवन भर वे महायोद्धा कहलाए। महायोद्धा के अंतस की भावनाएं और मर्यादा तो धर्म की स्थापना में होती है। उनके जीवन का उददेश्य और लक्ष्य धर्म और समाज की रक्षा का रहा। उन्होंने धर्म स्थापना का प्रण किया था और अपने प्रण-को पूरा करने के लिए उन्होने घर-गृहस्ती के सुखों का त्याग किया तथा जीवन भर वे यायावर की भांति विचरण करते रहे। वे अपने जीवन के समस्त सुखों का त्याग करके सदैव समाज के लिए, धर्म रक्षण के लिए कर्मरत रहे।

जब कार्तवीर्या ने श्री परशुराम जी के पिता की हत्या कर दी उस समय वे अत्यन्त पीड़ा में थे। एक ओर पिता की हत्या दूसरी ओर धर्म पर अधर्म का आक्रमण, न्याय पर अन्याय का अधिकरण इन सभी घटनाओं ने उन्हें आहत कर दिया। अपनी पीड़ा में भी वह विचार करते रहे कि क्या धरती पर अधर्म इस प्रकार फैल चुका है कि किसी भी निर्दोष की हत्या की जाए। उनके पिता जी, जो स्वयं एक महान ऋषि थे, तपस्वी थे, धर्म प्रिय थे, ईश्वर के अनुयायी थे उनकी हत्या यदि कोई कर सकता है तो इसका अर्थ यह हुआ कि धरती पर पाप तथा अधर्म इतना फैल चुका है कि कोई भी बलपूर्वक किसी भी निर्दोष की हत्या कर सकता हैं। तब उन्होंने अपनी पीड़ा के साथ-साथ समग्र समाज की पीड़ा को अपना लिया और अधर्मियों के नाश को वे प्रतिबद्ध हो गए क्योकि अंतस की कोमल भावनाएं ही दूसरों की पीड़ा में अपनी पीड़ा की अनुभूति करवाती है। अधर्मियों का नाश दूसरों की पीड़ा की अनुभति ही थी केवल प्रतिशोध होता तो आज वे भगवान नहीं कहलाते क्योंकि प्रतिशोध से तो केवल विध्वंस होता है धर्म रक्षण नहीं। प्रतिशोध करुणा, धर्म, दया, न्याय, ज्ञान आदि को समाप्त कर देता है। प्रतिशोध से जूझता हुआ व्यक्ति न्याय नहीं कर सकता है। वह प्रतिपल अपनी प्रतिशोध की ज्वाला में सुलगता रहता है। उसे समाज से, धर्म से, परोपकार से कोई वास्ता नहीं रहता। भगवान श्री परशुराम जी तो स्वयं परब्रह्म हैं। उन्हे समस्त भूमण्डल की चिन्ता थी धर्म, रक्षण की चिन्ता थी ओर धर्म की स्थापना ही उनके जीवन का लक्ष्य था। इतने महान लक्ष्य के समक्ष उन्हें अपने जीवन के सुख गौण प्रतीत हो रहे थे।

हिमाचल प्रदेश के जिला सिरमौर रेणुका झील परशुराम तीर्थ स्थल के रूप में विश्व प्रसिद्ध है। इस झील की ऊँचाई समुद्रतल से लगभग 672 मी० है। पुराणों में वर्णित कथा के अनुसार प्रतिवर्ष प्रवोधिनी एकादशी को भगवान परशुराम इसी झील पर अपनी मां से मिलने आते है। इस क्षेत्र को भगवती रेणुका का घर माना जाता है और यही वह स्थान

है जहां भगवती रेणुका और महत्रृषि जमद्‌गन्नि ने तपस्या के उपरान्त भगवान परशुराम को पुत्र रूप में प्राप्त किया था। यह भगवान की जन्म स्थली है।

ब्रह्मण्ड पुराण के अनुसार इसी रेणुका झील पर भगवान परशुराम जी के तप से प्रसन्न होकर भगवान शंकर ने इन्हे परशु भेंट किया था। उनका नाम राम था परन्तु परशु प्राप्ति करने के उपरान्त वे परशुराम कहलाने लगे। यहीं पर स्थित स्थान तापे का टीवा पर सहस्त्रबाहु ने आक्रमण करके उनके पिता का वध कर दिया था। पति की मृत्यु से संतप्त भगवती रेणुका राम सरोवर में समा गई। उनकी जल समाधि लेते ही झील नारी आकृति में परिवर्तित हो गई। तभी से इस झील का नाम रेणुका झील पड़ गया।

पिता की मृत्यु से दुखी हुए भगवान परशुराम जी ने जब मां को भी खो दिया ते वे संताप में डूबे हुए झील के तट पर खड़े हो कर अपनी मां को पुकारने लगे। तब मां झील से बाहर आई, उन्होंने पुत्र को आशीर्वाद दिया तथा कहा कि वे प्रत्येक वर्ष देव प्रवोधिनी एकादशी को उसे मिलने यहां आएगी। उन्होने भगवान परशुराम को वचन दिया कि इस पवित्र त्योहार पर मां की ममता तथा पुत्र की भक्ति पर उनका विशेष आशीष रहेगा।

यहाँ पर प्रत्येक वर्ष नवंबर में पांच दिन का मेला लगता है श्रद्धालु रेणुका झील पर स्नान करके मंदिर में भगवान के दर्शन करते हैं। भगवान परशुराम जी को पालकी में जम्मू से एक दिन पहले लाखों भक्तों के साथ लाया जाता है। इसको परंपरागत रूप में शोभा शात्रा कहा जाता है शोभा यात्रा में सभी वर्गो के लोग बढ़ चढ़ कर भाग लेते हैं। देश भर के कोने-कोने से कई संत-महात्मा शोभा यात्रा में सम्मिलित होते हैं। हवन-यज्ञ तथा मंत्रोच्चारण के साथ भगवान को दुग्ध स्नान करवा कर सुन्दर वस्त्र तथा आभूषणों से सजाया जाता है।

छप्पन-भोग में कई प्रकार के मिष्ठान्न तथा फलों से भगवान को भोग लगा कर पालकी में विराजमान करके शहर-बाजार से होते हुए मंदिर में स्थापित किया जाता है। कुल्लु के निरमांड गांव में भगवान परशुराम जी का प्राचीन मंदिर है। यह मंदिर पहाड़ी शैली में बना हुआ दो गंजिला है। मंदिर में भगवान की तीन सिर वाली मूर्ति विराजमान है। यह मूर्ति अत्यन्त प्राचीन मानी जाती है।

राजस्थान के जिला देसुरी पाली में परशुराम महादेव मंदिर में महांदेव की विशाल मूर्ति है साथ में परशुराम जी की मूर्ति है।

पंचम अध्याय

अक्षय तृतीता का महत्त्व

शौर्य, पराकम, वीरता, सत्य और न्याय के प्रतीक है भगवान परशुराम जी। उनका जन्म बैशाख मास की शुक्ल तृतीया को हुआ। अक्षय का शब्दिक अर्थ है जिसका कभी क्षय न हो। जो अनन्त है जो सनातन है। श्री परशुराम जी अक्षय तृतीया को उत्पन्न हुए अर्थात् उनकी शक्ति, उनकी शस्त्र शक्ति तथा उनकी शास्त्र संपत्ति अक्षय है। सत्य, न्याय धर्म के साथ साथ उन्होंने मानवता की रक्षा की।

भगवान श्री परशुराम जी का जन्म दिवस "परशुराम जयंती" के रुप में देश भर में हर्षोउल्लास तथा श्रद्धा के साथ मनाया जाता है। देश भर में इस शुभ अवसर पर शोभा यात्रा का आयोजन किया जाता है। शोभा-यात्रा का शुभारम्भ हवन और पूजा से किया जाता है। भगवान श्री परशुराम जी की प्रतिमा को गंगा जल, दूध, शहद, तुलसी दल, शक्कर से मन्त्रोउच्चारण के साथ स्नान करवा कर नए वस्त्र पहनाए जाते हैं तत्पश्चात उनकी पूजा कर के पुष्प माला पहनाकर उन्हें सुन्दर सुसज्जित पालकी में स्थापित किया जाता है। सबसे आगे पालकी लेकर भक्तजन भगवान का कीर्तन भजन करते हुए चलते हैं, पीछे बहुत से देवी-देवताओं की झाकियां निकाली जाती हैं शहर भर में घुमा कर हर्ष के साथ किसी एक निश्चित स्थान पर पहुँच कर सत्संग किया जाता हैं तथा भण्डारे का आयोजन किया जाता है।

बैशाख शुक्ल पक्ष तृतीया (अक्षय तृतीया) को बहुत पवित्र दिव्रस के रूप में जाना जाता है। त्रेता युग अक्षय तृतीया को आरम्भ हुआ था। इस दिन का अपने आप में विशेष महत्त्व है शादी, ब्याह, नया कारोबार

या कोई भी विशेष कार्य इस दिन करना शुभ माना जाता है। इस दिन सोने-चाँदी के आभूषण खरीदना शुभ माना जाता है। मान्यता है कि इस दिन किया गया कार्य सौ गुणा अधिक फल देता है।

ऋषि वेद व्यास ने महाभारत की रचना करने का जब विचार किया तो वे श्री गणेश जी के पास गए उन्होंने भगवान गणेश से अनुरोध किया कि जो श्लोक वे बोलेंगे उन्हे लिपीबद्ध (लिखने) करने के लिए उनकी सहायता करें। भगवान गणेश ने कहा एक शर्त पर यदि वे बिना रुके पूरी महाभारत लिखवाएं तो ठीक है वेद व्यास ने कहा मुझे स्वीकार है परन्तु आपको प्रत्येक श्लोक समझ आना चाहिए। भगवान मान गए। वेद व्यास बोलते गए गणेश जी लिखते गए बीच-बीच में वे इतना कठिन श्लोक कहते कि गणेश को समझने में समय लग जाता और जब तक समझ पाते वेद व्यास को दूसरा श्लोक सोचने का अवसर मिल जाता। इस प्रकार संपूर्ण महाभारत लिखने में तीन वर्ष लगे। महाभारत को लिखने की शुरूआत अक्षय तृतीया को ही हुई थी।

भगवान शिव की जटाओं में बसी पवित्र गंगा स्वर्ग से धरती पर इसी श्रेष्ठ दिन आई थी। इसी शुभ दिन में युधिष्टिर को अक्षय पत्र प्राप्त हुआ था जिससे वह अपनी प्रजा को अन्न-खादान्न की आपूर्ति करता था। श्री कृष्ण के मित्र सुदामा इस दिन भगवान की कृपा और स्नेह से धनवान हुए थे इसी दिन अन्नपूर्णा का जन्म हुआ था। देव कुबेर पर देवी लक्ष्मी की कृपा इसी दिन हुई थी और वे धन के स्वामी हो गए।

आदि शंकराचार्य जी एक वार एक गरीब नेक ब्राहमण के घर गए। ब्राहमण ने उनकी मन और श्रद्धा से सेवा की परन्तु उसके पास उन्हें खिलाने के लिए कुछ नहीं था अतः उसने अपना एकमात्र बेर उन्हे खाने को दिया जो उसके पास था। वह स्वयं तथा उसकी पत्नी भूखे रहे। इस पर प्रसन्न हो कर आदि शंकराचार्य जी ने उसे कनक धर स्तोत्र सुनाया जिसे सुनकर वह धन्य हो गया तथा उसे मोक्ष की प्राप्ति हो गई। यह सब प्रकरण भी अक्षय तृतीया को हुआ।

राजस्थान में भी इस पर्व की धूम रहती है। उत्सव का आरम्भ श्रीराम कथा से होता है। हवन, यज्ञ ओर शोभा यात्रा से उत्सव सम्पन्न होता है। झारखंड गुजरात और हिमाचल प्रदेश में भी यह त्योहार धूमधाम से मनाया जाता है। भिवानी हरियाणा में इस त्योहार को परंपरागत रूप से मनाया जाता है।

महाराष्ट्र में इसे अखा तीज़ के नाम भी जाना जाता है। गोआ तथा केरल में भी इस उत्सव को हर्षोउल्लास से मनाया जाता है। केरल को तो ''परशुराम क्षेत्र'' के नाम से ही जाना जाता है। ओड़ीसा (उड़ीसा) में इस उत्सव का स्वरूप और अधिक सुंदर हो जाता है। वहां पर अक्षय तृतीया के दिन लोग खेतों को जोतना आरम्भ करते है। ऐसा माना जाता है कि इस श्रेष्ठ दिन को खेत जोतने से भरपूर फसल उत्पन्न होती है। यहां पर इसी दिन पुरी की रथ यात्रा का प्रारम्भ होता है तथा रथ की साज-सज्जा पूजा पाठ के साथ आरम्भ की जाती हें। भक्त जन व्रत-उपवास करते हैं भगवान वसुदेव की पूजा चावलों से की जाती है।

पुराणों के अनुसार इस श्रेष्ठ दिन का ज्ञानर्जन तथा दान अत्यन्त फलदायी होता है। दान स्वरूप पंखी, नमक, घी, चीनी, सब्जियां, फल, वस्त्र तथा चावल आदि दिए जाते हैं।

बंगाल में इसी श्रेष्ठदिवस पर हलखट्टा उत्सव मनाया जाता है। इस दिन मां लक्ष्मी की पूजा तथा श्री गणेश पूजा रीति-रिवाजों के साथ की जाती है। जाट समुदाय के लिए इस दिन का विशेष महत्त्व होता है। घर का एक पुरुष कुदाल लेकर खेत में जाता है तथा गुढ़ाई का कार्य आरम्भ करता है। पूरे भक्ति भाव से अच्छी वर्षा की प्रार्थना की जाती है तथा पशुओं के लिए भी ईश्वर से शुभ आशीष मांगा जाता है।

बैशाख शुक्ल पक्ष की तृतीया को ही अक्षय तृतीया कहा जाता है। सभी भारतवासी अपनी-अपनी परंपराओं के अनुसार इस शुभ दिवस को हर्षो उल्लास से मनाते है।

जम्मू-कश्मीर में अक्षय तृतीया को परशुराम जयंती के रूप में मनाया जाता है। स्थान-स्थान पर श्रद्धालुओं द्वारा सुंदर, सुसज्जित, विशाल झाकियाँ निकाली जाती है। जिनके द्वारा भगवान के जीवनाशों को प्रस्तुत किया जाता है। इन झांकियों में समाज के सभी वर्गो के तथा सभी वर्णो के लोग सम्मलित होते हैं। इन झाँकियों में विभिन्न पौराणिक शस्त्रों की प्रतिमूर्ति की प्रदर्शनी लगाई जाती है तथा विशेषज्ञों द्वारा इन्हें चला कर भी दिखाया जाता है। यह त्योहार आपसी प्रेम तथा भाईचारे का संदेश देता है। विशाल जन समूह द्वारा भजन कीर्तन, सन्त-महात्माओं के प्रवचन तथा भण्डारे के साथ झाँकियों का समापन किया जाता है।

जय श्री परशुराम भगवान

सारांश

सत्य सनातन परमात्मा जो सूक्ष्म भी है और स्थूल भी हैं, जो मोक्ष को देने वाले हैं, जो संसार की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के मूल कारण हैं, जो विश्व के आधार हैं, पुरुषोत्तम, ज्ञान-स्वरूप, अजन्मा, अक्षय हैं मैं उन विष्णु भगवान को नमस्कार करती हूँ। जब-जब संसार में अधर्म फैलता है तब तब प्रभु अवतार लेकर धरती पर आते हैं तथा धरती का भार हल्का करते हैं। सनातन धर्म में अभी तक दस अवतार हुए हैं।

भगवान विष्णु के छठे अवतार, भगवान परशुराम जी महाराज का अवतार उस समय हुआ जब पाप, हिंसा, अपराध, अधर्म, दुराचार और अराजकता फैली हुई थी। सामान्यजनों का जीवन दूभर हो गया था। सज्जन, पुण्यात्मा, प्रभु भक्तों तथा सन्तों के प्रति श्रद्धा भाव लोप हो रहे थे। धार्मिक क्रियाकलाप करना कठिन हो गए थे। प्रजा पर जुर्म हो रहे थे केवल अन्याय का बोलबाला था। शासक अपने राजधर्म से विमुख हो रहे थे। ऐसे समय में भगवान परशुराम का अवतार प्रभु भक्तों की रक्षा हेतु हुआ। भगवान का अंश होने के नाते दिव्य शक्तियों का समावेश उनमें जन्म से था। भगवान शंकर, इन्द्र, भगवान विष्णु ने अपने दिव्य शक्ति शस्त्रों से उनका शृंगार किया। जिससे वे पराक्रमी, महान, वीर, अजेय योद्धा बने परन्तु उन्होंने अन्यायी शक्तियों का उन्मूलन कर सुयोग्य, सुपात्र को राज कार्य सौंपा। उन्होंने अन्यायी राजाओं को तो हराया परन्तु उनका उद्देश्य किसी को हराकर स्वयं राजा बनना नहीं था। उनके अवतार का उद्देश्य अन्याय का नाश कर धर्म की स्थापना करना रहा।

बहुत सी ऐसी बातें हैं जो उनके विषय में बहुत कम लोग जानते हैं जैसे नारी उत्थान के लिए उन्होंने कार्य किए। उनकी विचारधारा कितनी स्पष्ट और उत्तम थी यह इस बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि उस काल में उन्होंने विराट–नारी जागृति संगठन बनाया जिसमें अत्रि की पत्नी अनुसूया, अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा व उनके प्रिय शिष्य अकृतवेण का सहयोग लिया।

शस्त्र–शास्त्र विधा को समाज की रक्षा हेतु सुयोग्य सुपात्र लोगों में प्रसारित किया और उन्हें योद्धा बनाया। राज धर्म करने वाले राजाओं से उन्होंने कभी विरोध नहीं किया।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र भगवान से सामना होने पर उन्होंने उनके स्वरूप को पहचान लिया और वे समझ गए कि अमानवीय, दुराचारी शक्तियों का नाश करने के लिए प्रभु अवतार ले चुके हैं तो उन्होंने अपने शस्त्र उनको सौंपे और उनका गुणगान किया और स्वयं तपस्या करने हेतु वहाँ से निकल गए। उनसे बहुत से योद्धाओं ने शस्त्र विद्या सीखी परन्तु जिसने भी असत्य, अधर्म और अन्याय का साथ देने के लिए इस विधा का उपयोग किया उसकी पराजय हुई। इससे हमें यह प्रेरणा मिलती है कि अन्याय कितना भी बलशाली क्यों न हो अंत में जीत केवल सत्य और धर्म की ही होती है, जीत केवल न्याय और सद्कर्मों की ही होती है। इसलिए धर्म मार्ग ही उत्तम मार्ग है।

भगवान श्री परशुराम की जय, सनातन धर्म की जय, गौ माता की जय, भारत वर्ष की जय हो।

भगवान श्री परशुराम चालीसा

॥ दोहा ॥

ऋषिवर परशुराम शरण, विनती करे नर-नार।
क्षमा दान कर कीजियो, उज्जवल यह संसार॥
बल-बुद्धि, विद्या के धनी, श्री परशुराम महाराज।
भक्त प्यारे शंकर के, श्री विष्णु के अवतार॥

जय श्री परशुराम सुखदाता। शस्त्र, शास्त्र के अनुपम ज्ञाता॥
मईया रेणुका हैं बड़ भागी। जिनकी गोद में खेले योगी॥
जमदाग्नि के पुत्र भए तुम। दया दृष्टि के पात्र हुए हम॥
अंग केसरी वस्त्र साजें। तीनों लोक में आप विराजे॥
एक हाथ में परसा साजे। दूसरे हाथ में धनुष विराजे॥
कंठ धारी रूद्राक्ष की माला। मन मंदिर में डेरा डाला॥
योगी कर्मठ वीर बहादुर। शस्त्र शास्त्र के जाने सब गुर॥
नयनन में सूरज का यौवन। सिहर उठे दुर्जन का तन-मन॥
शौर्य पराक्रम से भरपूर। देख दुष्ट भागें अति दूर॥
त्रेता युग अवतरे मुनि ज्ञानी। महिमा उनकी सबने मानी॥

अक्षय तृतीया जन्म है लीना। भक्त जनों को धन्य है कीना॥
कर्त्तवीर्या का वध कीना। कामधेनु फिर वापिस लीना॥
परशुराम की कीर्ति अनुपम। दुख दरिद्र निवारें हरदम॥
मस्तक साजे तेज तुम्हारे। संकट हरो प्रभु आप हमारे॥
प्रभु सुनी आपकी बहुत बढ़ाई। मन-मन्दिर छवि आपकी छाई॥
जिनके घर प्रभु आप विराजें। तिनके शोहरत मस्तक साजे॥
प्रभु लगन हमें ऐसी लागी। मन भक्ति की हूक है जागी॥
ऋषि पुत्र प्रभु अति बलशाली। कृपा करो दर आए सवाली॥
दान दया का हमको दीजो। बिगड़े काज सफल तुम कीजो॥
अक्षय तृतीया अति प्यारी। भक्त मिलन की करी तैयारी॥
मन्दिर को फूलों से सजाऊँ। फल-मिष्ठान का भोग लगाऊँ॥

वीर मुनि संकट से उबारें। दीन-दुखियन के काज संवारे॥
महादेव के भक्त प्यारे। रोम-रोम प्रभु बसो हमारे॥
गणपत से जब युद्ध था छेड़ा। परसा मार एक दन्त था तोड़ा॥
जब आप प्रभु शिवशरण में आए। तब गणपत एक दन्त कहाए॥
शिवधनुष प्रभु राम जो तोड़ा। क्रोधित हो तप-ध्यान था छोड़ा॥
मईया सीता प्रणाम जो कीना। सौभाग्यवती आशीष था दीना॥
रूप चतुर्भुज छवि राम पछानी। सौंप शस्त्र तब तप की ठानी॥
विष्णु के प्रभु छठे अवतार। महिमा आपकी अपरम्पार॥
द्रोण, भीष्म थे शिष्य प्यारे। धन्य प्रभु जो आप पधारे॥
हम सांसारिक तुच्छ से प्राणी। महिमा क्या जानें अज्ञानी॥
परसे से सागर को थामा। तब जग ने शक्ति को माना॥
यशोगान जो आपका गावें। मनवांछित फल सदा वे पावें॥
सुख आनंद की आई घड़ी है। कुसुम चरण प्रभु आन पड़ी है॥
तन मन से जो आपको ध्यावें। निश्चित विजय का सुख वे पावें॥
चरण तिहारी आन पड़े सब। सबके संकट पीड़ हरो अब॥
जय-जय परशुराम जो गावें। कृपा आपकी हर पल पावें॥
शरण आपकी जो कोई आवे। संकट कटे महासुख पावे॥
जो कोई पाठ करे शतवारा। उसका सफल हो जीवन सारा॥
जय-जय परशुराम महाराज। पूर्ण करियो सबके काज॥

वंदना

परशुराम महाराज की सदा हो जय जयकार।
सुख संपती पावें सभी कटें कलेश विकार॥
काम, क्रोध, तृष्णा का करें सच्चे मन से त्याग।
जन-कल्याण की भावना के आवें उच्च विचार॥
बुद्धिहीन हमें जानकर प्रभु दान दया का दीजो।
नतमस्त हो आपसे करें यह विनती बारम्वार॥

श्री सतगुरू चालीसा

हठ से कर्म, कर्म से भक्ति, भक्ति से पाएं गूढ़ ज्ञान।
चतुर्योग से खुल जाएं, ध्यान के अनगिनत सोपान।।
सूक्ष्म-स्थूल, जड़-चेतन के, अंतर का करते जो व्याख्यान।
नमश्कार उन सत्गुरू को, जो देते इतना अनुपम ज्ञान।।

जय-जय सत्गुरू संत न्यारे, शरणागत के काज संवारे।
मुखमण्डल का तेज है अनुपम, ज्ञान, भक्ति, शक्ति का संगम।
भाल सोहे है कीर्ति गौरव, मधुर वचन महकें मन सौरभ।
जप, तप, ध्यान श्रृंगार तिहारे, संगत खड़ी है आन द्वारे।
चरण कमल है धारी खड़ाऊं, मिथ्या जगत से मोक्ष मैं पाऊ।
सत्गुरू महिमा अति निराली, निर्बल को कर दें बलशाली।
मोक्ष प्राप्ति की राह दिखाएं, जीवन सुंदर-सफल बनाएं।
संगत के दुख आप निवारें, जन्म-मरन के दुख से उभारें।
मखमल सी वाणी है अमृत, संगत का मन कर दें पुलकित।
ज्ञान गंगा है बहती अविरल, मैं हूं तुच्छ सा प्राणी निर्बल।
बीत रहा आयु का क्षण-क्षण, मेरा उज्जवल कर दो जीवन।
गुरू रूप धर हरि हैं आए, भव सागर से पार लगाएं।
भाग्य-विधाता आप हमारे, संकट हरो श्री गुरू हमारे।
गुरू-कृपा जिस जन पे होए, सुख, आनन्द, परम पद पाए।
गुरू शरण में जो कोई आवे, दुविधा से वो पार है पावे।
सत्गुरू कृपा का अन्त न कोई, कटें क्लेश सर्व सुख होई।
भव सागर से पार लगाएं, मुक्ति मार्ग की राह दिखाएं।
सत्यवान गुरु हैं सदाचारी, सब संगत निज आज्ञाकारी।
सत्गुरू आज्ञा सर्वोपरि, सतसंग परहित हेतु करि।

धर्मपरायण सत्गुरू प्यारे, अंतकरण की दशा संवारें।
जाति-पाति का भेद मिटाएं, जन समता के भाव जगाएं।
बाह्य-मिथ्या, मोह मिटाकर, भीतर की दुनिया से मिलाएं।
अंदर है अज्ञान का साया, दूर करो मोह-भ्रम की छाया।
गुरू स्थान गोबिन्द से ऊंचा, गुरू जैसा नहीं मीत है दूजा।
जग में सत्गुरू राह दिखाएं, अतंर्मन के कष्ट मिटाएं।
गुरू ज्ञान का अमृतपान, जो जन करे हो धनवान।
संत कथन है अमृत वाणी, इनकी महिमा सबने मानी।
गुरू दर्श सा सुख नहीं दूजा, नित्य करूं मैं ध्यान और पूजा।
गुरू ज्ञान बिन अंतर सूना, सतसंग बिन सुख पाऊं कहीं न।
सत्गुरू मेरी सुर्त चढ़ाओ, दशम द्वार का मार्ग दिखाओ।
शरण तिहारी आए सत्गुरू, ज्ञान-दान के मोती लुटाओ।
मन उज्वल तो आप ही कीजो, सुख-संपत्ति संग शोहरत दीजो।
अंदर बसी थी झूठ की माया, आपने उसको मार गिराया।
भीतर ज्ञान की ज्योत जगाई, चित्त-शुद्धी की राह बताई।
मात गुरू है, पिता गुरू हैं, ग्रंथों का हर शब्द गुरू है।
गुरू ब्रह्म हैं, गुरू हैं विष्णु, देवों के महादेव गुरू हैं।
सत्गुरू मन की ज्योत जगाएं, ज्ञानवान निर्मल चित्त पाएं।
चारों युग व्याख्यान तुम्हारा, जग प्रसिद्ध ज्ञान की धारा।
कुसुमवर्षा से गुरूवचन है, ध्यान-ज्ञान अनमोल रत्न हैं।
जय गुरूदेव शुभमंगलकारी, धर्म-कर्म हैं सब जगतारी।

वंदना

सत्गुरू तेरी शरण पड़े हैं, विनती सुनो हमार।
नाम-दान के पात्र को, दो खुशियों का उपहार।।
अंतर्यामी घट-घट के तुम, परम-ज्ञान के धाम।
अंतकरण की ज्योत जगा कर, तार दो यह संसार।।

कु० कुसुम लता जी

MA, MED

